खंड 2

मानवीय विविधता, विचार और उद्विकास के सैद्धांतिक पक्ष की समझ

इकाई 5	मानव विविधता और उद्विकास	75
इकाई 6	जैविक उद्विकास के सिद्धांत	87
इकाई 7	उद्विकास की बुनियादी अवधारणाएं	101

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 5 मानव विविधता और उद्विकास *

इकाई की रूपरेखा

5.0 प्रस्तावना

5.1 जीवन उद्विकास के प्रारम्भिक सिद्धांत

5.1.1 सहज पीढ़ी का सिद्धांत

5.1.2 जीवन की बा उत्पत्ति का सिद्धांत

5.1.3 जीवन का कोई आरम्भ नहीं

5.1.4 वर्तमान स्थितियों की अनंतता शाश्वतता का सिद्धांत

5.1.5 सृजनवाद का सिद्धांत

5.1.6 प्रलयवाद या आपदावाद का सिद्धांत

5.1.7 जैविक उद्विकास का सिद्धांत

5.2 मानवीय विभिन्नताएं और प्रजाति की उत्पत्ति

5.3 मानवों का प्रजातिकरण (नस्लीकरण)

5.3.1 फ्रेंकोइस बर्नियर

5.3.2 कार्ल बॉन लीनियस

5.3.3 जी.एल.एल. कॉम्टे डी बफॉन

5.4 सारांश

5.5 संदर्भ

5.6 आपकी प्रगति जाचने के लिए उत्तर

अधिगम उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से हम निम्न विषयों पर अपनी समझ विकसित कर सकेंगे :

- जीवन की उत्पत्ति के बारे में जान सकेंगे
- जीवन उत्पत्ति के विभिन्न विचारों और सिद्धातों से परिचित हो सकेंगे, मानवीय विविधता और विभिन्नता को समझ सकेंगे और प्रजातियता की अवधारणा पर समझ विकसित कर सकेंगे तथा
- फ्रेंकोइस बर्नियर, कार्ललीनियस, जी.एल.एल. कॉम्टे डी बफॉन द्वारा वर्णित नस्लीय वर्गीकरण को समझने में सहायता मिलेगी।

5.0 प्रस्तावना

जीवन की उत्पत्ति के बारे में ठीक तरह से अनुमान नहीं लगाया जा सकता है, लेकिन इस बात के प्रमाण हैं कि 3.5 अरब साल पहले जीवाणुओं की तरह के जीव पृथ्वी पर रहते थे, उनका अस्तित्व और पहले भी हो सकता है, क्योंकि चार अरब साल पहले पहली ठोस परत

* प्रो. ए. के. कपूर, मानव विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

वाले जीवों के गठन का प्रमाण मिलता है। (नो के एवं अन्य., 2013) जैविक दृष्टिकोण से, जीवन की उत्पत्ति के विषय और उससे जुड़े उद्विकास की पूव समीक्षा की आवश्यकता के साथ-साथ संभावित स्पष्टीकरण की भी जरूरत है। वैज्ञानिकों ने हमेशा इस सवाल पर विचार किया, लेकिन वह इस समस्या से जुड़ा कोई निर्णायक प्रमाण प्रस्तुत नहीं कर पाए हैं। यद्यपि जीवाश्म की खोजों ने उद्विकास के सवाल में बहुत योगदान दिया है, लेकिन प्राचीन महाकल्प (आर्कियोजोइक युग) में होने वाले व्यापक परिवर्तनों के कारण जीवन के शुरुआती स्वरूप के बारे में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है।

ब्र ांड में पृथ्वी और अन्य स्थानों पर जीवन के विकास का सवाल हमेशा उतना चुनौतीपूर्ण रहा है जितना कि स्वयं ब्र ांड के विकास का सवाल। विज्ञान भी ब्र ां की उत्पत्ति के बारे में एक प्रामाणिक विवरण प्रदान नहीं करता है, न ही यह विका के लिए विवादास्पद 'बिग बैंग' सिद्धांत के बारे में स्पष्टता रखता है न ही हाल के व में खगोल विज्ञान, खगोल भौतिकी और आणविक जीव विज्ञान क्षेत्रों में काफी प्रगति बावजूद जीवन की उत्पत्ति के बारे में कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण प्रदान करता ब्र ांड के विकास के लिए हॉट इन् लेशनरी बिग बैंग 'मॉडल जीवन की उत्पत्ति के ब में मान्यताओं की नींव के रूप में काम करने के लिए पर्याप्त सुरक्षित नहीं है, जो इ तथ्य से बहुत अधिक उदाहरण के लिए छूट देता है सबसे दूर की आकाशगंगाए, ह आज देख सकते हैं, जितनी समृद्ध दिखती हैं और पूरी तरह से हमारे स्वयं के रूप विकसित हुई हैं, भले ही वे ब्र ांड की वर्तमान आयु के बमुश्किल5% हैं, यानी बिग बैंग के लगभग 700 मिलियन वर्ष बाद। इस ग्रह पर जीवन की शुरुआत के लिए अग्र कई कारकों के बीच, पैन्सपर्मिया 'हमारे ग्रह पर जीवन के उद्भव के लिए सब पसंदीदा परिकल्पना प्रदान करता है। यह एक परिकल्पना है कि मूल जीवन, मूल रू से अलौकिक हो सकता है। इस अवधारणा के अनुसार, जीवन के बीज सर्वव्यापी और हो सकता है कि उन्होंने पृथ्वी के साथसाथ ब्र ांड के अन्य पवित्र पिंडों को भ जीवन प्रदान किया हो। (लाल, 2008

सृजन की समस्या में दो पहलू हैं: पहला खुद जीवन की उत्पत्ति से जुडा विषय और दूसरा जीवन के अन्य रूपों की उत्पत्ति। 1960 में एच. एफ. ओसबोर्न (H- F- Osborn) ने जीवन की उत्पत्ति की समस्या से जुडे सवाल उठाए:

- क्या पृथ्वी पर जीवन की उपस्थिति (प्रकटीकरण) ने जीवन उत्पत्ति का कोई नया कारक ईजाद किया है या यह सूर्य, सितारों और पृथ्वी पर पाए जाने वाले ऊर्जा और पदार्थों के रूपों की उद्विकासवादी निरंतरता है
- क्या जीवन के उद्विकास को उद्विकासवादी प्रक्रिया के हिस्से के रूप में अकार्बनिक उद्विकास का रूप माना जा सकता है या यह मूल रूप से एक अलग घटना है
- क्या इस शब्द में कोई ठोस निर्माण है या ऊर्जा का कुछ नया रूप उत्पन्न होता है
- क्या जीवन का उद्विकास प्राकृतिक कानूनों के अधीन क्रमशः विकसित होने का विषय है या इसका उद्विकास किसी संयोग के कारण हुआ है (शुक्ला और रस्तोगी, 1990)

कई अध्ययनों और शोधकर्ताओं ने जीवन के प्रारंभिक उद्विकास प्रक्रिया को स्पष्ट करने का प्रयास किया लेकिन उनकी मान्यताओं और स्पष्टीकरणों की पुष्टि अभी तक की जा सकी है।

5.1 जीवन के उद्विकास के प्रारंभिक सिद्धांत

कई धार्मिक व्यक्तियों, जिनमें अनेक वैज्ञानिक भी शामिल हैं, मानते हैं कि ब्र ांड और भौतिक और जैविक उद्विकास को चलाने वाली विभिन्न प्रक्रियाओं को ईश्वर ने बनाया है और इन प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप आकाशगंगाओं, सौर मंडल और पृथ्वी पर जीवन का निर्माण हुआ है। यह विश्वास, जिसे कभी-कभी यथार्थवादी उद्विकास (थेस्टिक इवोल्यूशन) कहा जाता है, उद्विकास के वैज्ञानिक स्पष्टीकरण के साथ असहमत नहीं है। दरअसल, यह ब्र ांड विज्ञान, जीवाश्वमीय अध्ययन, आण्विक जीवविज्ञान और कई अन्य वैज्ञानिक विषयों द्वारा प्रकट भौतिक ब्र ांड के उल्लेखनीय और प्रेरक चरित्र को दर्शाता है'' (स्मिथ, 2014)। जीवन की उत्पत्ति पर कुछ प्रमुख सिद्धांत निम्नवत हैं

5.1.1 सहज पीढ़ी का सिद्धांत

सहज पीढ़ी का सिद्धांत उतना ही पुराना माना जाता है जितना की मानव को। हालांकि, इस विचार को लेकर काफी मतभेद और विवाद रहे हैं। सहज पीढ़ी का विचार यूनानी दार्शनिक और वैज्ञानिक अरस्तू से जुडा है। इस सिद्धांत के अनुसार, जीवन भौतिक-रासायनिक स्थितियों की एक श्रृंखला के परिणामस्वरूप निष्क्रिय अकार्बनिक पदार्थ से उत्पन्न हुआ जो पृथ्वी के उद्विकास के दौरान अस्तित्व में था। उदाहरण के लिए नमी और गर्मी के प्रभाव में कीचड़, खाद और मि ी में जीवन उत्पन्न हुआ था। हालांकि, इस तरह की परिकल्पना को लाजारो स्पैलानजानी, फ्रांसिस्को रेडी और लुई पाश्चर ने अस्वीकार कर दिया था। इन वैज्ञानिकों ने अच्छी तरह से डिजाइन किए गए वैज्ञानिक प्रयोगों का प्रदर्शन करके सहज पीढ़ी के सिद्धांत को अस्वीकार कर दिया। हालांकि, सहज पीढ़ी का विचार अभी भी तक पूरी तरह से खत्म नहीं हुआ हैं। जीवन की उत्पत्ति को लेकर कई छद्म या मिथ्या स्पष्टीकरण पदार्थ के पदार्थ के अंतर्निहित गुण, आकस्मिक गुण, या स्वयं-संगठनात्मक सिद्धांतों के कारण (विशेष रूप से गैर-जीवविज्ञानी द्वारा लिखित) की वजह से साहित्य में काफी प्रचलित है। यह कमोबेश अरस्तू की परंपरा को ही दर्शाता है। (फेनेल, 2002)

5.1.2 जीवन की बा उत्पत्ति का सिद्धांत

स्वीडिश रसायनविद स्वेन्ते अरहेनियस ने 1908 में अपने विचार दिए कि जीवन ब्र ांड में कहीं और पैदा हुआ था जो पूरे ब्र ांड में व्याप्त है। इस विचार के अनुसार, पृथ्वी पर सबसे पहले सूक्ष्म जीवों का उद्विकास हुआ जो कि किसी तरह से अपने ग्रहों से बच निकले थे और प्रकाशीय दबाव के साथ पृथ्वी पर आ गए थे। यह विचार जो पंसपर्मिया परिकल्पना, के रूप में प्रसिद्ध है, 20वीं शताब्दी में सबसे अधिक प्रचारित रहा'। जीवन की बा उत्पत्ति का सिद्धांत (थ्योरी ऑफ एक्रस्ट्रा टेरिटोरियल ओरिजन) के समर्थकों में फ्रांसिस क्रिक (जो जेम्स वाटसन के साथ मिलकर और अन्य ने डीएनए की संरचना की खोज की) और फ्रेड होयले (कई विज्ञान कथा उपन्यासों के लेखक) जैसे कई प्रमुख व्यक्ति शामिल हैं। (फेंचेल, 2002) हालांकि, यहां यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि हमारे पड़ोसी निकट ग्रहीय सौर प्रणाली में जीवन की संभावना असंभव है लेकिन अगर इन सभी बाधाओं को किनारे भी कर दिया जाता है तो यह भी बेहद असंभव है कि कोई भी सूक्ष्मजीव ब्र ांडीय विकिरण के संपर्क में टिक सकता है। जीवन की बा उत्पत्ति का सिद्धांत (थ्योरी ऑफ एक्रस्ट्राटेरिटोरियल ओरिजन) को संभवतः स्थापित करना कठिन होता है, लेकिन यह एक ऐसा प्रयास है, जो जीवन के उत्पन्न होने के बारे में बताने का प्रयास करता है और उनसे जुड़े सवालों को पृथ्वी के बाहर ब्रम्हांड में उत्पन्न करने की कल्पना करता है।

5.1.3 जीवन का कोई आरम्भ नहीं

कुछ दार्शनिकों के अनुसार जीवन की कोई शुरुआत नहीं थी और यह हमेशा अस्तित्व में था। जीवन ऊर्जा और पदार्थ के रूप में शाश्वत है और संभवतः दोनों को एक विशेष अभिव्यक्ति माना जा सकता है। वास्तव में ऐसा सिद्धांत कल्पना और आध्यात्मिकता के दायरे में जाता है। (शुक्ला एवं रस्तोगी, 1990)

5.1.4 वर्तमान स्थितियों की अनंतता शाश्वतता (इटरनिटी) का सिद्धांत

यह सिद्धांत इस विचार का प्रस्ताव करता है कि ब्रह्मांड अपरिवर्तनीय है। जीव अपने व्यक्तिगत अस्तित्व में अस्थिर रहते हैं और अनंत काल में एक ही अपरिवर्तनीय स्थिति में रहा है। जे. हटन (1726-1797) इस विचार के समर्थक थे। इसकी व्याख्या को गलत माना गया, इसलिए यह विचार बहुत कम लोगों द्वारा स्वीकारा गया।

5.1.5 सृजनवाद का सिद्धांत

सृजनवाद सिद्धांत वकालत करता है कि जीवन के सभी रूप ईश्वर द्वारा बनाए गए थे। 'उत्पत्ति' किताब यानि 'पवित्र बाइबल' के अनुसार, आदम और ईव, ईश्वर द्वारा बनाए गए पहले पुरूष और महिला थे। ईसाई, मुस्लिम और यहूदियों में ईश्वर द्वारा ब्रह्मांड के निर्माण के सात दिनों पर एक आम सहमति है। इस दृष्टिकोण के अनुसार, दुनिया और सभी जीवित चीजें ईश्वर द्वारा सृजन की एक घटना में उत्पन्न हुए हैं। स्पैनिश जेसुइट, फादर सुअरेज (1548-1617) सृजनवाद के सिद्धांत पर भरोसा करने वाले और उसके समर्थको में से एक थे। महान प्रकृतिवादी कार्ल लिनिअस (1758) भी यह मानते थे कि सभी प्रजातियां हमेशा ईश्वर द्वारा निर्मित होती हैं। उन्होंने प्रजातियों की अस्थिरता के दृष्टिकोण का भी समर्थन किया। हालांकि, उन्होंने संकरण द्वारा नए रूपों या जीवन की उपस्थिति की संभावना से इंकार नहीं किया। (शुक्ला और रस्तोगी, 1990)

5.1.6 प्रलयवाद या आपदावाद का सिद्धांत

इस सिद्धांत को विशेष निर्माण के सिद्धांत का विस्तार माना जाता है। इस सिद्धांत के अनुसार, जीवन का निर्माण सृजन से हुआ है। सृजन के बाद आपदा आई, जो कि विभिन्न भौगोलिक परिवर्तन के कारण होती है। प्रत्येक आपदा ने पूरी तरह से जीवन को नष्ट कर दिया और प्रत्येक सृजन ने उच्च स्तर के संगठन को जन्म दिया जो पिछले से अलग और जटिल हुआ। पेरिस विश्वविद्यालय के तुलनात्मक एनाटॉमी के प्रोफेसर जॉर्ज क्यूवियर (1769-1832), इस सिद्धांत के मुख्य समर्थक थे। उनका मानना था कि शुरुआत में पृथ्वी पर कोरल, मोलस्क और क्रस्टेसियन थे। पौधे शुरुआत में उभरे, इसके बाद मछलियों, सरीसृप, पक्षियों और स्तनधारियों का आगमन हुआ। उनका मानना था कि मानव अंतिम भूगर्भीय परिवर्तन के बाद आया। शोधकर्ताओं द्वारा क्यूवियर के विनाश के सिद्धांत पर कई आधारों पर आलोचना की गई, क्योंकि जीवन की शुरुआती उत्पत्ति के सवाल और उसके बाद के रूपांतर के प्रश्नों के जवाब अस्पष्ट थे।

5.1.7 जैविक उद्विकास का सिद्धांत

मध्य युग के समय और आधुनिक युग की शुरुआत में जैविक उद्विकास की नई व्याख्याए और उनसे जुडे संस्करण उभरे। अवीसेना, जो अरब देश में विज्ञान के प्रमुख प्रतिनिधि (979-1037) माने जाते हैं ने, जीवाश्मों को जीवित प्राणियों का एक अपरिष्कृत या कच्चा मसौदा माना। अल्बर्ट वॉन बोलेटैड को जिन्हे अल्बर्टस मैग्नस (1206-80) के नाम से भी जाना जाता

है, ने यह स्वीकार किया कि पौधे और पशु-अवशेषों को पेट्रीफिकेशन द्वारा जीवाश्मों में बदल दिया गया होगा। प्रसिद्ध फ्रांसीसी वैज्ञानिक बर्नार्ड पालिसी ने भी विलुप्त प्रजातियों और विलुप्त रूपों का विचार दिया था। इसी तरह रॉबर्टथुक (1635-1703) और लीबनिज (1646-1716) ने एक उद्विकासवादी प्रवृत्ति को प्रतिबिंबित किया और माना कि जीवाश्म पृथ्वी के अतीत को प्रकट कर सकते हैं। इन विचारों ने स्पष्ट किया कि सभी प्रा तिक प्राणियां एक श्रृंखला बनाती हैं जिसके अंतर्गत विभिन्न वर्ग बनते हैं। जे. मोनबोडदो (1714-1790) ने प्रजातियों की उत्पत्ति और मनुष्य के उद्विकास से संबंधित सिद्धांतों का सुझाव दिया। जे डब्ल्यू गोएथे (1749-1832) विचार भी उद्विकास पर प्रसिद्ध है इसलिए उन्हें डार्विन के पूर्ववर्ती माना जाता था। इमानुअल कांट (1724-1804) ने भी अपने समय के जैविक सिद्धांतों को बहुत प्रभावित किया था। इसके अलावा 1794 में चार्ल्स डार्विन (1731-1802) ने आनुवंशिकता और प्रा तिक चयन के विचार को रेखांकित किया और इन्हें उद्विकास की अवधारणा से जोड़ा। (शुक्ला और रस्तोगी, 1990)

चार्ल्स लाइएल (1797-1875) ने छोटे क्रमिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप बहु-भूगर्भीय घटनाओं पर विचार करने पर बल दिया। इस विचार ने उद्विकास को आधार बनाया और उद्विकास को प्र ति के सार्वभौमिक कानून के रूप में प्रदर्शित किया। उद्विकास को 19वीं शताब्दी की महान बौद्धिक उपलब्धि भी माना गया। लैमार्क और डार्विन ने स्वतंत्र रूप से सिद्धांत को प्रतिपादित किया कि सभी जानवर सरल प्रकार से विकसित हुए हैं। रूप और कार्यों में लगातार उद्विकास के कारण इन सरल प्रकारों में क्रमिक परिवर्तन हुए। कार्बनिक उद्विकास के इस सिद्धांत ने वैज्ञानिक दुनिया में एक बड़ी क्रांति लाई और अंत में इस विचार को स्वीकार किया गया। लैमार्क और डार्विन का योगदान आज भी महत्वपूर्ण माना जाता है। (शुक्ला और रस्तोगी, 1990)

अपनी प्रगति को जाचें

1) ..... आपदावाद के सिद्धांत का मुख्य समर्थक थे।

2) नमूनाकरण (सैम्पलिंग)' दुर्घटनाओं के माध्यम से जीन का नुकसान ..... के रूप में परिभाषित किया गया है।

3) जे डब्ल्यू गोएथे को ..... के पूर्ववर्ती माना जाता था।

5.2 मानवीय विभिन्नताए और प्रजाति की उत्पत्ति

जैविक मानव विज्ञानी मुख्य रूप से मानव शारीरिक भिन्नताओं से जुड़े क्षेत्र का अध्ययन करते हैं। यह विभिन्नताएं आनुवंशिकता और पर्यावरण बलों के संयुक्त प्रभाव द्वारा उत्पन्न होती हैं, जो कि पूरे उद्विकास की रूपरेखा तैयार करती है। मानव भिन्नताओं के प्रमुख स्रोतों में शामिल हैं:

- उत्परिवर्तन, यह कोशिका के आणविक संरचनाओं में परिवर्तन द्वारा होता है जिसके परिणामस्वरूप नए जीन का निर्माण होता हैं या अनुवांशिक पदार्थ की संख्या और क्रम में पुनर्गठन होता है।
- चयन, यानी पर्यावरण में दबाव, जो कुछ जीन वाले व्यक्तियों के अस्तित्व और प्रजनन के पक्ष में होता हैं और दूसरों के साथ उनके अस्तित्व और प्रजनन को बाधित करता हैं।

- जीन प्रवाह, जो कि अन्य आबादी के सदस्यों के साथ सामयिक या कभी-कभी संभोग के माध्यम से नए जीनों की आबादी द्वारा अधिग्रहण किया जाता है।
- जेनेटिक बहाव, यानी नमूनाकरण (सैम्पलिंग) में त्रुटि या अपस्पष्टता के कारण जीन का नुकसान। (बील्स और होइजर, 1959)

मानव भिन्नताओं के इन स्रोतों के परिणामस्वरूप मनुष्यों और उसकी आबादी के बीच कई शारीरिक या रूपात्मक (संरचनात्मक/बनावट) अंतर होते हैं, जो अंतर्निहित जैविक विभिन्नता को भी प्रतिबिंबित करते हैं। कुछ संरचनात्मक या बनावट संबधी अंतर जिनमें त्वचा, आंख, और बालों के रंग और शरीर की आ ति और आकार नग्न आखों से देखा जा सकता है। कुछ अन्य जैविक अंतर जो वास्तविक हैं लेकिन आसानी से नहीं देखे जा सकते हैं। इनमें रक्त का प्रकार, फिंगरप्रिंट पैटर्न और रोग के प्रति संवेदनशीलता शामिल हैं। इन सभी लक्षणों में विभिन्नताओ को ध्यान में रखा जाए तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि होमो सेपियंस एक प्रजाति है जिसमें काफी जैविक भिन्नता है। गहराई से अध्ययन करे तो हम इनकी जैविक विविधताओं को व्यक्तियों के भौगोलिक प्रतिरूप के संबंध में भी देख सकते हैं, उदाहरण के लिए काली गहरी त्वचा के रंग वाले लोग उप-सहारा अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया और प्रशांत क्षेत्र के कुछ द्वीपों में उच्च आवृत्तियों में पाए जा सकते हैं, जबकि सफेद त्वचा वाले लोग स्कैंडिनेविया और उत्तरी यूरोप और एशिया समेत दुनिया के अन्य हिस्सों में बहुतायत में पाए जाते हैं। इस तरह के भौगोलिक प्रतिरूप में जैविक विविधता ने नस्लीय/प्रजातीय वर्गीकरण प्रणाली के लिए पारंपरिक कच्चे माल का निर्माण किया। (एनीमोन, 2015) भौगौलिक विभिन्नता ने तमाम जैवकीय लक्षण और विशेषताओं को उभारा जिसने मानव आबादी में, प्रजाति की उत्पत्ति की शुरुआत की।

5.3 मानवों का प्रजातीकरण

प्रजाति की अवधारणा क्रमशः वंशावली (जीनोलॉजिकल संबधी) भावना या अवधारणा से विकसित हुई जिसमें जीवविज्ञान' की बढ़ती प्रवृत्ति शामिल है। अगर हम इस अवधारणा के इतिहास में जाए तो पाएगें कि वंश-आधारित प्रवृत्ति और विचार का प्र तिवादी दृष्टिकोण की ओर बदलाव हुआ, जिसे सबसे पहले मानव पर लागू किया गया और बाद में शेष जीव जगत तक लाया गया। (होक्वेट, 2014) 15वीं, 16वीं और 17वीं शताब्दी की खोजों और अन्वेषण ने यूरोपीय लोगों को कई नए लोगों के साथ संपर्क में जोड़ा जिसके बाद ही विद्वानों ने उन लोगों को उलझा देनी वाली विविधता (क्योंकि वे यूरोपीय नागरिको से पूर्णतया भिन्न थे) के कारणों और उनके पदानुक्रम को खोजने में दिलचस्पी ली। इस प्रयास ने मानव की प्रजाति को लगभग विस्तृत वर्गीकरण करने का प्रयास किया (स्लॉटकिन, 1944) । प्रजाति के गठन और नियमन का विचार सबसे पहले तीन प्रारंभिक वार्गिकी के विद्वान (टैक्सोनोमिस्ट) द्वारा प्रस्तावित किया गया, जिसमें: फ्रांस्वा बर्नियर (1625-1688), कार्ल लिनिअस (1707-1778) और जी. एल लेक्लेर डी बफॉन (1707-1788) प्रमुख थे। इम्मानुअल कांट, जोहान फ्रेडरिक ब्लूमेंबैक, जॉन लॉक और थॉमस हॉब्स समेत कई अन्य महत्वपूर्ण विद्वानों ने भी जाति और मानव विविधता की अवधारणा को समझाने की कोशिश की। निम्नलिखित खंड फ्रांस्वा बर्नियर, कार्ल लिनिअस और डी बफॉन द्वारा प्रस्तावित नस्लीय वर्गीकरण का वर्णन करता है:

5.3.1 फ्रेंकोइस बर्नियर

फ्रांसीसी यात्री फ्रांस्वा बर्नियर द्वारा मानव प्रजाति का पहला वर्गीकरण दिया गया था। 1684 में, फ्रेंच एकेडमी ऑफ साइंसेज की जर्नल डेस स्कैवन्स नामक पत्रिका में फ्रांस्वा बर्नियर ने

एक लेख *न्यू डिवीजन ऑफ द अर्थ* नामक एक अज्ञात लेख प्रकाशित किया, जो विभिन्न प्रजातियों के बसाव पर आधारित था। इस छोटे लेख और प्रयास को प्रजाति की आधुनिक अवधारणा की पहली प्रस्तुति के रूप में दर्ज किया गया है, लेकिन आमतौर पर इसे केवल जिज्ञासा के रूप में वर्णित किया जाता है। (बोउल, 2003) इस लेख में बर्नियर ने दुनिया को प्रजातियों के आधार पर विभाजित करने का प्रयास किया है, जिसके लिए उन्होने मानव विज्ञान को भूगोल विषय के लिए कुंजी के रूप में पेश किया। बर्नियर की पहली प्रजाति में प्राचीन मास्कों के एक हिस्से को छोड़कर यूरोप के लोग शामिल थेय इसमें अरब, फारस, भारत और सियाम के माध्यम से अफ्रीका के भूमध्य तट से बोर्नियो के कुछ हिस्सों तक फैले क्षेत्र के एक विस्तृत भू-भाग में रहने वाले लोगों को भी शामिल किया गया था। पहली प्रजाति को अनिर्धारित छोड़ दिया गया था और अन्य तीन प्रजातियों को अफ्रीकी, एशियाई और लैपलैंड के सामूहिक लोग शामिल किए गए थे। इन तीनों प्रजातियों में से प्रत्येक को भौतिक विशेषताओं और त्वचा के रंग के संयोजन से चि ित किया गया था।

बर्नियर के अनुसार, पहली प्रजातियो के अन्तर्गत प्राचीन मास्कों के एक हिस्से को छोड़कर सभी यूरोपीय हिस्से को रखा गया था। इस समूह के अन्तर्गत, मिस्र के लोग और (पूर्व) भारतीय बहुत काले हैं, या तांबे के रंग थे, यह रंग इसलिए प्रभावी है क्योंकि यहां के लोग सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में रहते हैं और जो लोग इन परिस्थियों में खुद का ख्याल रखते हैं और ऐसी परिस्थितियों में जीने के लिए बाध्य नही हैं वे स्पेनियों की तुलना में गहरे रंग के नही हैं। यह सच है कि ज्यादातर भारतीय हमसे बहुत अलग हैं और उनके चेहरे का आकार और उनका रंग बहुत अलग होता है, जो अक्सर पीले रंग के करीब आता है। लेकिन यह विशेषताएं उन्हे अलग करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं, अन्यथा स्पेन को जर्मन लोगों के लिए अन्य विशेषताओं का निर्माण करना होगा। ऐसा ही यूरोप के कई अन्य देशों के साथ ऐसा करना आवश्यक होगा।

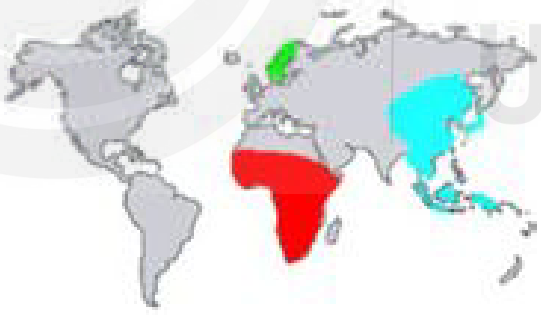

चित्र 1 : फ्रेंकोइस बर्नियर का प्रजातीय वर्गीकरण

स्रोत : https:/ fi.wikipedia.orgèwiki/Fran%C3%A7ois_Bernier

दूसरी प्रजातियों के अंतर्गत, अफ्रीकी शामिल हैं। उनके कुछ विशिष्ट लक्षण होते हैं जिनमें मोटे होंठ, मोटी भारी नाक, काली त्वचा जो चिकनी और चमकदार होती है, प्रमुख हैं। उनमें से बहुत कम हैं जिनके पास पैनी या नुकीली (एक्वाइलीन) नाक और मध्यम मोटाई के होंठ हैं। उनके बाल, सामान्य रूप से दिखने वाले बालों जैसे नहीं होते हैं, यह किसी न की तरह दिखाई देते हैं। उनके दांत बेहतरीन हाथीदांत सरीखे सफेद होते हैं, उनकी जीभ और उनके मुंह और उनके होंठ मूंगा की तरह लाल होते हैं।

तीसरी प्रकार की प्रजातियां एशियाई लोगों की है, जहां सभी देशों के लोग सफेद हैं। लेकिन उनके कंधे चौड़े होते हैं, एक चपटा (लैटः चेहरा, एक छोटी–मोटी नाक, छोटी बिना ढ़ली (अनगढ़ी) आंखें, लंबे और घने तीन तरह के बाल होते हैं। लाप्स चौथी प्रजातियां बनाते हैं। वे मोटे पैरों के साथ नाटे कद की प्रजाति है, जिनके चौड़े कंधे, छोटी गर्दन और लम्बा बढ़ा हुआ चेहरा होता है। अमेरिकियों के रूप में, उनमें से अधिकतर जैतून का रंग और उनके चेहरा हमसे अलग तरीके से गढ़े या ढ़ले हुए होते हैं। इसके अतिरिक्त यूरोप में कद, चेहरे का घुमाव, रंग और बाल आमतौर पर बहुत अलग ढंग के होते हैं। (बर्टन और लूमबा, 2007)

यह विभाजन असमान था, पहली प्रजाति के साथ यूरोप, उत्तरी अफ्रीका, मध्यपूर्व भारत साथ ही साथ दक्षिणपूर्व एशिया, जबकि दूसरी प्रजाति अफ्रीकी, तीसरी प्रजाति एशिया का हिस्सा (चीन आदि) का एक हिस्सा, चौथा, लैपलैंड। प्रजातियों' के बीच विभेद का आधार रंग नहीं था, क्योंकि उनमें से दो को सफेद की श्रेणी में रखा गया थाः मंगोल, चीनी, और जापानी को उनके शारीरिक स्वभाव में बहुत अंतर के बावजूद वास्तविक रूप से सफेद' के रूप में वर्णित किया गया। बर्नियर का नस्लीय वर्गीकरण महाद्वीपों पर आधारित था लेकिन उन्होंने सख्ती से उसका पालन नहीं किया। अफ्रीका के निवासियों (पूरे भूमध्य तट) को पहली श्रेणी में समूही त किया गया था, लेकिन मूल अमेरिकी की स्थिति स्पष्ट नहीं थी। उन्हें पांचवां विभाजन बनाकर गणना के अंत में रखा गया। बर्नियर का पाठ आम तौर पर यूरोप में मानवता के नस्लीय विभाजन के विचार के शुभारंभ' के लिए पहचाना जाता था। लेकिन जिस तरीके से उन्होंने मानवता को विभाजित किया वह मूर्खतापूर्ण था, और वास्तव में यह नहीं देखा कि अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी में नस्लीय विभाजन कैसा दिखता है।' (होक्वेट, 2014)

5.3.2 कार्ल वॉन लीनियस

मानव जाति का पहला वैज्ञानिक वर्गीकरण कार्ल वॉन लिने ने दिया था, जिसे 1758 में *सिस्टमा नेचुरे* (Systema Nature) के दसवें संस्करण में प्रकाशित किया गया था। यह वर्गीकरण त्वचा के रंग के मानदंड पर आधारित था, इसने उन्नीसवीं शताब्दी के नस्लीय वर्गीकरण की नींव रखी। 1735 में *सिस्टमा नेचुरे* के पहले संस्करण ने मानव (होमो) को चार प्रकारों से प्रस्तावित कियाः यूरोपेयस अल्बेस्क (सफेद), अमेरिकनस रूबेस्क (लाल), एशियाटिकस फस्कस (गाढ़ा) और अफ्रीकीस निगर (काला)। 1735 के बाद, इस संस्करण में लगातार परिवर्तन किए जाते रहे और इसे अठारहवीं सदी में बदल दिया गया। कार्ल लीनियस या कार्ल वॉन लिने ने मानव विज्ञान में प्रजाति का वर्गीकरण रंग के आधार पर शुरू किया। लिनिअस के वर्गीकरण को मानव विज्ञान द्वारा मनुष्य के पहले आधुनिक अध्ययन के रूप में जाना जाता था। अपने प्रकाशन में उन्होंने मानवजाति के चार प्रमुख भौगोलिक प्रजातियों के नाम का वर्णन किया, जो अभी भी उन्नीसवीं शताब्दी के मानव विज्ञान शब्दावली में मान्यता प्राप्त है। लीनियस का भौगोलिक वर्गीकरण या उप-प्रजातियां का वर्गीकरण उत्साही खोजों में संग्रहित सामग्री, विशेष लक्षणों जिनमें भौतिक विशेषताएं, व्यक्तिगत लक्षण, सांस्कृतिक पहलु के आधार पर किया था। चार भौगोलिक प्रजाति का वर्णन इस प्रकार से हैः

- *होमो अमेरिकनसः* लाल, कोलेरिक, हठी, संतुष्ट, और रीति-रिवाजों द्वारा नियंत्रित
- *होमो यूरोपियनः* गोरे, चंचल (अस्थिर), आशावादी, नीली आंखें, कोमल, और कानूनों द्वारा नियंत्रित
- *होमो एशियाटिकसः* भूरा, गंभीर, सम्मानित, अशिष्ट, और राय द्वारा नियंत्रित

z *होमो अफेरः* काला, क रपंथी, चालाक, आलसी, वासनापूर्ण, लापरवाह, और आवेश द्वारा नियंत्रित (हेलर, 1971)

चित्र 2 : कार्ल वॉन लिनिअस का प्रजातीय वर्गीकरण

स्रोत : https:èèfi.wikipedia.orgèwikièFran%C3%A7ois_Bernier

लिनिअस के वर्गीकरण ने एक ऐसे विचार का सुझाव दिया जो पदानुक्रम और असमानता पर आधारित था। उनके व्यक्त किए गए वर्गीकरण में व्यक्तित्व और सांस्कृतिक लक्षणों के संबंध में एक स्पष्ट पश्चिमी अवधारणा के प्रति पूर्वाग्रह मौजूद था। लिनिअस के वर्गीकरण का रैखिक पदानुक्रम यहूदी-ईसाईयों के महान श्रृंखला' या सृजन की सीढ़ी (लैडर ऑफ क्रियेशन) ' की अवधारणा से प्रभावित था। इस अवधारणा में ईश्वर के द्वारा सृजित सभी जीव जिनमें सबसे सरल और आदिम जीवन से लेकर सबसे अधिक जटिल जीवन के स्वरूप को, एकरेखीय संरचना का स्वरूप माना जाता था, यह एक कड़ी या सीढ़ीनुमा श्रृखंला सरीखी थी। जब लिनिअस ने जब अपनी चार उप-प्रजातियां या प्रजातियों का वर्गीकरण महान श्रृंखला की धारणाओं के प्रभाव में बनाई तो उनके लिए एक रैखिक पदानुक्रम स्थापित करना स्वाभाविक था, कुछ प्रजातियां ईश्वरीय और दूसरी एप(बंदरों) के करीब थीं।

इस प्रकार प्रजाति का पहला वैज्ञानिक वर्गीकरण कई महत्वपूर्ण पहलुओं में आधुनिक नस्लीय वर्गीकरण जैसा दिखता है, जिसमें सहज ज्ञान के आधार पर असमानता की धारणा और प्रजाति के रैखिक श्रेणी या पदानुक्रम और व्यापक रूप से प्लैटोनिक (आध्यात्मिक) भाव के साथ लाखों लोगों को वर्गी त कर दिया गया था जिन्हें सामान्य तौर पर रूढ़िबद्ध तरीके से ही देखा जाता था। (एनीमोन, 2015)

5.3.3 जी.एल.एल. कॉम्टे डी बफॉन

1749 में जी. एल. एल. कॉम्टे डी बफॉन ने रेस शब्द को प्रा तिक इतिहास के साहित्य में पेश किया। बफॉन ने उन प्रजातियों के बीच अंतर को पहचाना जो एक-दूसरे के साथ मिलकर सहवास नहीं कर सके और ना ही पुनरुत्पादन। बफॉन ने प्रजातियों के अन्तर्गत उनकी भी पहचान की जो प्रजाति के भीतर ऐसा कर सकते थे। लिनिअस की तरह बफॉन होमो सेपियंस की एकल उत्पत्ति में विश्वास करते थे। प्रजाति का विभेदीकरण कुछ समय बाद हुआ जब मानव आबादी अधिक हो गई और दुनिया भर में फैल गई। मानव प्रजातियों की एकता के समर्थक के रूप में बफन लैपलैंडर्स, मंगोलियाई, दक्षिणी एशियाटिक, यूरोपियन, इथियोपियाई और मलेशिया श्रेणियों को शामिल किया। वे अन्य लेखकों के साथ प्रजाति का निर्धारण कर रहे थे, बफन ने अपने लेखन में, प्रजाति के निर्धारण में मूल्य को महत्वपूर्ण केन्द्रीय भूमिका में रखा। उन्होंने तर्क दिया कि मूल प्रजाति यूरोपीय थी और अन्य दूसरी प्रजातियां यूरोपीय मानदंड अपघटन (यानि बिगड़ा हुआ रूप) थीं।

अमेरिकी संभवतः उस वातावरण में रहते थे, जो सबसे कम वि त हुआ था, जबकि अफ्रीकी और लाप्स शायद सबसे अधिक वि त वातावरण में हुए। सफेद रंग को मानक रंग मानते हुए बफन ने अन्य त्वचा की प्र ति के लिए जलवायु की अनियमितताओं को जिम्मेदार बताया। बफन के अनुसार, जलवायु स्थानीय पर्यावरण के भोजन, मि ी, वायु और अन्य पहलुओं पर सीधा प्रभाव डालती हैं, जिसका प्रभाव मानव रूपरेखा और शरीर विज्ञान पर प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ता है। इस प्रकार प्रजातीय विभिन्नता विशेष रूप से त्वचा के रंग में अंतर के लिए पर्यावरण विशेषताओं को आसानी से जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। बफन की वर्गीकरण प्रणाली मुख्य रूप से भौगोलिक स्थितियों के इर्द-गिर्द थी। दरअसल बफन, लिनिअस की तरह ही थे, जो एक प्रजातियों की स्थिरता और जीवत जीवों के निर्माण के लिए विशेष (दिव्य) निर्माता की अवधारणा में विश्वास करते थे। दोनों ने जैविक परिवर्तन की कल्पना प्रजातियों के स्तर पर केवल दिव्य रूप से बनाई। (डी सूजा, 1996, जैक्सन एंड वीडमैन, 2004, एनीमोन, 2015)

मानवजाति का पहला वर्गीकरण, पद्धति या मानदंडों के संबंध में वर्तमान समय के वर्गीकरण से भिन्न नहीं था। वर्गीकरण के आधार व मानदंड परिष्करण में सबसे बड़ा सुधार गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों रूपों में किया गया। (स्लॉटकिन, 1944)

अपनी प्रगति को जाचें

4) वर्तमान स्थितियों की अनंतता के सिद्धांत को किसने प्रतिपादित किया

   क) फ्रांसिस क्रिक

   ख) जे. हटन

   ग) फ्रेंकोइस बर्नियर

   घ) थियोडोसियस डोबजांस्की

5) प्रा तिक इतिहास के साहित्य में प्रजाति शब्द को किसने शामिल किया

   क) कॉम्टे डी बफन

   ख) फ्रेंकोइस बर्नियर

   ग) कार्ल वॉन लिनिअस

   घ) थियोडोसियस डोबजांस्की

6) सिस्टमा नेचुरी किताब किसने लिखी

   क) कार्ल वॉन लिनिअस

   ख) कॉम्टे डी बफन

   ग) चार्ल्स लियेल

   घ्ज्ञ) इरास्मस डार्विन

7) सिस्टमा नेचुरी के पहले संस्करण में होमो प्रजातियों के कितने प्रकार बताए गए थे

क) तीन

ख) चार

ग) दो

घ) पांच

5.4 सारांश

जीवन के प्रारंभिक उदविकास से जुड़े सिद्धांत और मान्यताएं प्राचीन काल से ही चली आ रही हैं। इन सिद्धांतों का विस्तार जीवन के धार्मिक और सहज उत्पत्ति के सिद्धांत से लेकर मनुष्य के जैविक उद्विकास की अवधारणा तक हुआ। उद्विकासवादी प्रक्रिया ने मानव विविधता और विभिन्नताओं के लिए आधार बनाया। दुनिया भर की मानव प्रजातियों में जीन और आकारिकी के संदर्भ में कई जैविक भिन्नताएं होती हैं। कई मानव जीवविज्ञानी और मानवविज्ञानियों ने इन मानवीय विविधताओं का विश्लेषण और वर्णन करने का प्रयास किया है। पूर्व डार्विनियन काल में मानव जाति की गणना और वर्गीकरण पर अधिक जोर दिया गया था। इनका दृष्टिकोण एक प्रतीकात्मक ढांचे के आधार पर समूहों के बीच भिन्नता पर बल देना था। कई शोधकर्ताओं ने मानव भिन्नताओं को अलग-अलग प्रजातियों की एक निश्चित संख्या में काम करने का प्रयास किया। इससे स्पष्ट है कि मानव जातियों की संख्या पर सदियों से जारी बहस उप-प्रजातियों के स्तर पर अपेक्षित भिन्नता का अंतर्निहित मॉडल' मानवीय विविधता का विश्लेषण करने का सबसे उपयुक्त माध्यम नहीं है।

5.5 संदर्भ

एनीमोन, आर. एल., (2015) *रेस एंड ूमन डाइवर्सिटी अ बॉयोकल्चरल अप्रौः* रूटलेज.

बील्स आर. एल., एंड होइजर एच., (1959) *एन इंट्रोक्डशन टू एंथ्रोपोलार्ज,* न्यूयॉर्क.

बाउल, पी. एच., (2003). फ्रांस्वा बर्नियर एंड द ओरिजिन ऑफ द माडर्न कान्सेप्ट ऑफ रेस. *द कलर ऑफ लिबर्टी : हिस्ट्रीज ऑफ रेस इन फ्रांः* 11–27. ड्यूक यूनिवर्सिटी प्रेस, डरहम, एन सी.

बर्टन जे., एंड लोम्बा ए. (2007). *रेस इन अर्ली मॉर्डन इंग्लैड. अ डॉक्यूमेंट्री कम्पैनियः* स्प्रिंगर.

डी. सूजा डी., (1996). *द एंड ऑफ रेसिज्मः फंडिंग वैल्यूज इन एन एज ऑफ टैक्नोअ लुएएएंः* साइमन और शूस्टर.

फेंशेल, टी., (2002). *द ओरिजिन एंड अर्ली इवोल्यूशन ऑफ लॉइफ* यूनिवर्सिटी प्रेस, यूएसए.

हॉलर, जे.एस. (1971). *आउटकास्ट फ्रॉम इवोल्यूश्नः सांइटफिक एटीट्यूड्स ऑफ रेसियल इनफर्रिटी,* 1859–1900. एसआईयू प्रेस.

होकेट टी., (2014). बायोलाइजेशन ऑफ रेस एंड रेसियलाइजेशन ऑफ ूमन. इन बैंसेल एन, डेविड टी, एंड थॉमस डी,(संपा.), *द इनवेंशन ऑफ रेसः सांइटफिक एंड पापुलर रिप्रजेनटेशनः* (खंड28, पेज 17–32). रूटलेज.

जैक्सन जे. पी., एंड वीडमैन एन.एम., (2004). *रेस, रेसिज्म एंड साइंसेज: सोशल इम्पैक्ट एंड इंटरएक्शन.* एबीसी-क्लियों.

लाल ए. के., (2008). ओरिजन ऑफ लाईफ. *एस्ट्रोफिजिक्स एंड स्पेस साइंस,* 317 (3–4), 267-278.

नोफके एन., क्रिश्चियन डी., वेसी. डी., एंड और हेजेन आर एम., (2013). माइक्रोबियल इनड्यूसड सेडिमेंटरी स्ट्रक्चर्स रिकार्डिंग एन एंसिएंट इकोसिस्टम इन द का. 3.48 बिलियन इयर्स ड्रेसर फॉर्मेशन, पिलबारा, पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया. *एस्ट्रोबायोलॉजी,* 13 (12), 1103–1124.

शुक्ला, बी. आर. के., एंड रस्तोगी एस. (1990). *शारीरिक नृविज्ञान और मानव आनुवंशिकी एव परिचय.* पलका प्रकाशन, दिल्ली.

स्लोटकिन जे.एस. (1944). रेसियल क्लासीफिकेशन ऑफ द सेवेन्टीन एंड ए ीन सेन्चुरी. *ट्राजिक्शन ऑफ द विस्कॉन्सिन अकेडमी ऑफ साइंसेज,* 36, 459–467.

स्मिथ एफ., (2014). द *साइंस ड़िल्यूजन* बुकबाय कंपनी, न्यू जर्सी.

5.6 आपकी प्रगति जाचने के लिए उत्तर

1) जार्ज कूवियर
2) जेनिटिक ड्रि ट
3) चार्ल्स डार्विन
4) ख
5) क
6) क
7) ख

इकाई 6 जैविक उद्विकास के सिद्धांत *

इकाई की रूपरेखा

6.0 परिचय

6.1 उद्विकास के सिद्धांत

6.1.1 लैमार्कवाद

6.1.2 नव–लैमार्कवाद

6.1.3 डार्विनवाद

6.1.4 उत्परिवर्तन के सिद्धांत

6.1.5 आधुनिक संश्लिष्ट (सिंथेटिक) सिद्धांत

6.2 सारांश

6.3 संदर्भ

6.4 आपकी प्रगति जाचने के लिए उत्तर

अधिगम उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप समझने में सक्षम होंगे :

- जैविक उद्विकास की अवधारणा
- उद्विकास के स्वरूप और
- जैविक उद्विकास के विभिन्न सिद्धांतों को जानना।

6.0 परिचय

जैविक उद्विकास, शारीरिक/जैविक मानव विज्ञान के प्रमुख विषयों में से एक है। आइए सबसे पहले उद्विकास को समझते हैं। क्रमिक उद्विकास का सीधा और सरल मतलब है बदलाव'। हर्बर्ट स्पेंसर (1857) ने जीवन के अधिक जटिल रूपों (पौधों और जानवरों) के विकास को सरल और पुराने रूपों से संदर्भित करने के लिए पहली बार उद्विकास शब्द का उपयोग किया। इवोल्यूशन विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग किया जाने वाला शब्द है लेकिन जब हम जीवों, पौधों और जानवरों के विकास की बात करते हैं तो इसे जैविक विकास कहा जाता है। जैविक विकास या जैव विकास परिवर्तन के साथ नये वंशज या निरंतर संशोधनों के साथ जीवन की निरंतरता' का बने रहना है। जैविक उद्विकास का तात्पर्य है कि वर्तमान में जटिल और उच्च संगठित जीवों का विकास पिछले कुछ वर्षों में क्रमिक और संचित संशोधनों द्वारा अतीत के सरल और कम संगठित जीवों से हुआ है। यह सुझाव देता है कि प्र ति में पर्यावरण की स्थिति हमेशा बदल रही है।

* डॉ. पी. वेंकटरमण , मानवविज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, प्रो. ए.के. कपूर, (सेवानिवृत) मानव विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली. प्रो. जॉयदीप सेन, मानव विज्ञान विभाग,उत्तर–बंगाल विश्वविद्यालय, दार्जलिंग, पश्चिम बंगाल.

विकास को पांच अलग-अलग प्रतिमान (पैटर्न) में वर्गीकृत किया जा सकता है : विचलन (डाइवर्जेंट) अभिसरण (कनवर्जेंट) सह-उद्विकास (को-इवोल्यूशन) समांतर उद्विकास (पैरलल इवोल्यूशन) और अनुकूली विकिरण (एडिप्टिव रेडियेशन)।

- विचलन (डाइवर्जेंट) यह उद्विकास होता है, जब जनसंख्या बाकी प्रजातियों से अलग (किसी कारण वश) हो जाती है और नए चयनात्मक दबावों के संपर्क में जा जाती है, जिससे यह एक नई प्रजाति में विकसित हो जाती है। समरूप संरचनाएं विचलन उद्विकास का प्रमाण है। उदाहरण के लिए व्हेल चमगादड़, चीता और मानव (सभी स्तनधारियों) में आगे के हाथों की (फोरआर्म्स की) हड्डियों के पैटर्न में समानताएं पाई जाती है। हालांकि ये फिर्लिम्ब इन जानवरों में अलग-अलग कार्य करते हैं, लेकिन इन सभी में समान संरचनात्मक संरचना है, इसलिए इन जानवरों में विभिन्न आवश्कताओं के अनुकूलन के कारण एक ही संरचना अलग-अलग दिशा में विकसित हुई।
- अभिसरण (कनवर्जेंट) उद्विकास : ऐसा तब होता है जब असंबंधित प्रजातियां समान पर्यावरण पर कब्जा कर लेती है, लेकिन वे समान चयनात्मक दबावों के अधीन होते हैं और समान अनुकूलन दिखाती हैं। तितली और पक्षियों के पंख समान दिखते हैं। वे संरचनात्मक रूप से समान सरंचना नहीं हैं, हालांकि वे समान कार्य करते हैं इसलिए अनुरूप संरचना अभिसरण विकास का एक परिणाम है – एक ही कार्य के लिए विकसित होने वाली विभिन्न संरचनाएं होती हैं, इसलिए इनमें समानता है।
- सह उद्विकास (को-इवोल्यूशन) : सह-विकास दो परस्पर क्रियाशील प्रजातियों के अनुकूलन का पारस्परिक उद्विकासवादी समुच्चय है। पोलिनेटर पौधे के बीच संबध इसका एक उदाहरण है। फूल से पराग से भोजन प्राप्त करते समय, कीट, पक्षी या चमगादड़ अनजाने में फल की प्रजनन सफलता सुनिश्चित करता है।
- समांतर उद्विकास (पैरलल इवोल्यूशन) समांतर विकास दो संबंधित प्रजातियों का वर्णन करता है। जिन्होंने समान पूर्वज से उनके विचलन के बाद समान विकासवादी अनुकूलन किए हैं। उत्तरी अमेरिका और ऑस्ट्रिलिया का तस्मानियाई भेड़िया एक उल्लेखनीय उदाहरण है। वे एक सामान्य साझा करते हैं, और हजारों मील दूर समान वातावरण में विकसित होते हैं।
- अनुकूली विकिरण (एडिप्टिव रेडियेशन) : अनुकूली विकिरण एक पर्यावरण में समान पूर्वज से कई प्रजातियों का उद्भव है। इस घटना का एक उदाहरण चार्ल्स डार्विन द्वारा गेलापामोस द्वीप समूह पर प्रसिद्ध किया गया था। डार्विन ने एक अलग पारिस्थितिकी में पाई जाने वाली फिंच पक्षी की 14 प्रजातियों की खोज की। प्रजातियों के बीच सबसे महत्वपूर्ण अंतर उनकी चोटियों में भिन्नता है, जो विभिन्न आहारों के लिए, अनुकूलित हैं। वे सभी एक ही पैतृक प्रजाति से विकसित हुए वे और जो कि अलग–अलग वातावरणों में फैल गई (गोल्डबर्ग एवं गोल्डबर्ग, 2009)।

जीवों में बदलते पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार बदलने का एक अंतर्निहित गुण है, इसे अनुकूलता या अनुकूलन कहा जाता है। जीवों में इस तरह के अनुकूली परिवर्तन नई प्रजातियों की उत्पत्ति' उद्विकास अनुकूलन के कारण होते हैं इसलिए नई प्रजातियां हमेशा बेहतर होती हैं और अपने पूर्वजों की तुलना में अधिक व्यवस्थित होती हैं। एक प्रजाति के

अलग-अलग सदस्य, विभिन्न वातावरणों के अनुकूल होने पर, विविध रूप रेखाओं के साथ विकसित होते हैं। वर्तमान की सभी प्रजातियों के विकास के पीछे कहीं न कहीं एक ही पूर्वज थे। व्यक्ति अपनी उत्पत्ति के स्थान से विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में भोजन की तलाश में या शिकारियों की वजह से विस्थापित हुआ और धीरे-धीरे विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों में अनुकूलित हुआ। परिणामस्वरूप एक पैतृक प्रजाति से कई नई प्रजातियों का गठन हुआ। तुलनात्मक शरीररचना और रूपरेखा आज के जीवों और सालों पहले के जीवों के बीच समानताएं और विभेद दिखाती है (मोंडल एवं अन्य)। इस तरह की समानता को समझने के लिए व्याख्या की जा सकती है कि आम पूर्वजों को साझा किया गया था या नहीं।

उद्विकास एक बहुत ही जटिल और अत्यंत धीमी प्रक्रिया है। एक प्रकार के जानवरों को दूसरे में बदलते हुए देखना संभव नहीं है लेकिन, जीवों के बीच की उपस्थिति विकास की अवधारणा का समर्थन करती है।

अपनी प्रगति को जाचें

1) उद्विकास किस रूप में वर्णित किया जा सकता है :

   क) जीवों में क्रमिक अनुकूली परिवर्तनों की प्रक्रिया

   ख) प्रजाति का इतिहास

   ग) प्रजाति में बदलाव

   घ) आनुवंशिक संरचना में परिवर्तन

2) अनुरूप संरचनाएं इंगित करती हैं :

   क) समानांतर उद्विकास

   ख) अभिसरण उद्विकास

   ग) विचलन उद्विकास

   घ) प्रा तिक उद्विकास

6.1 उद्विकास के सिद्धांत

कई सिद्धांतों ने उद्विकास की प्रक्रिया को समझाने का प्रयास किया लेकिन जैविक विकास के वैज्ञानिक आधार को स्पष्ट करने वाले सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत हैं : लैमार्कवाद, डार्विनवाद, उत्परिवर्तन सिद्धांत (म्यूटेशन थ्योरी) और उद्विकास का संश्लेष्णात्मक विचार या सिद्धांत।

6.1.1 लैमार्कवाद

जीन बैप्टिस्ट पियरे एंटोनी डी मोनेट लैमार्क (1744-1829) एक फ्रांसीसी प्र तिवादी थे, जो उद्विकास के अपने सिद्धांत के लिए जाने जाते हैं। लैमार्क के विकास के सिद्धांत को *फिलॉसोफिक जूलॉजिक* में 1809 में लैमार्कवाद के रूप में प्रकाशित किया और यह जैविक उद्विकास (ऑर्गेनिक इवोल्यूशन) का सिद्धांत है। यह लोकप्रिय रूप से उपार्जित लक्षणों की वंशानुगति के नाम से जाना जाता है। यह नई प्रजातियों की उत्पत्ति की व्याख्या करता है।

चित्र 1: लैमार्क (1744–1829)

स्त्रोत : https://en.wikipedia.org/wiki/Jean-Baptiste_Lamarck

लैमार्क ने जीवित रूपों के विकास के पीछे दो प्रमुख कारकों को मान्यता दी: पहली जटिलता के नए स्तरों तक पहुंचने के लिए जैविक पदार्थों की एक अंतर्निहित प्रवृत्ति दूसरा पर्यावरण की संशोधित क्षमता। लैमार्क के अनुसार, सरल रहने वाले जीवों से जटिल जीवों का निर्माण होता है। पर्यावरण स्थिर नहीं रहता है, यह बदलता है। पर्यावरण में परिवर्तन जीवों के लिए नई जरूरतें प्रदान करते हैं। नई जरूरतों के जवाब में जीव, नई संरचनाएं विकसित करते हैं। जीवों में भिन्नता उपयोग और उपयोग के प्रभाव से उत्पन्न होती है। निरंतर उपयोग एक संरचना को बहुत विकसित करता है और उपयोग के लिए संरचना को कमजोर बना देता है। पर्यावरण की प्रतिक्रिया में जीवों द्वारा विकसित नई संरचनाओं को अधिग्रहित वर्ण कहा जाता है। इन अधिग्रहीत पात्रों को पीढ़ी दर पीढ़ी प्रेषित किया जाता है और इस तरह एक नई प्रजाति का उत्पादन किया जाता है (लार्करिज़्म फ्रॉम ओई, तिथि अनिर्धारित)।

लैमार्क के सिद्धांत में निम्नलिखित धारणाए और प्रस्ताव हैं :

6.1.1.1 मान्यताए

- जीवित जीव और उनके हिस्से जीवन के आंतरिक जीवन शक्ति के कारण लगातार आकार में वृद्धि करते हैं।
- नए अंगों (लक्षणों) को नई आवश्यकताओं की जरूरतों को पूरा करने के लिए विकसित किया जाता है और बनाए रखा जाता है (उपार्जित लक्षण)।
- अंगों का विकास और उनका उपयोग इन अंगों की गतिविधियों के समानुपातिक है। अंगों के उपयोग और अनुपयोग के परिणामस्वरूप बदलाव होते हैं।

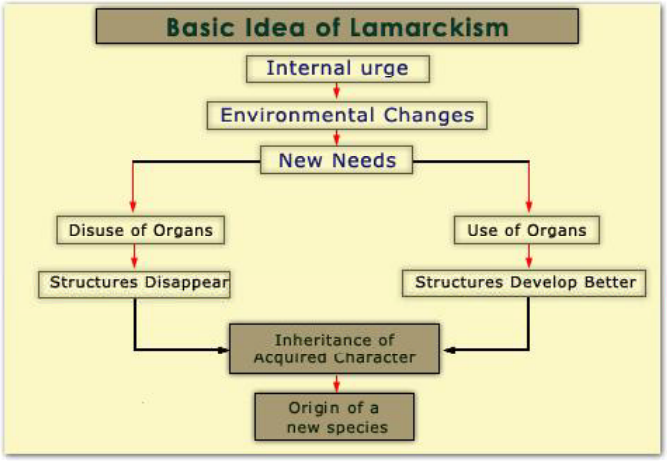

चित्र 2 : लैमार्कवाद का मूल विचार

स्त्रोत : https: /www.tutorvista.com

- प्रत्येक नया लक्षण, जो एक जीव अपने जीवन में हासिल करता है, संरक्षित होता है और उनके द्वारा अगली पीढ़ी में हस्तानांतरित किया जाता है (उपार्जित लक्षणों की वंशानुगति) (थियरी ऑफ इवोलूशन, तिथि अनिर्धारित)।

6.1.1.2 प्रस्ताव

आंतरिक शक्ति अथवा आत्म प्रेरणा : जीवित जीव और उनके हिस्से जीवन की आंतरिक शक्तियों के कारण लगातार आकार में वृद्धि करते हैं। लैमार्क ने सोचा कि आदतों के परिवर्तन से एक नए अंग का निर्माण शुरू हो सकता है या मौजूदा अंग या संरचना का संशोधन हो सकता है।

- उपार्जित लक्षणों की वंशानुगति : पर्यावरणीय प्रतिक्रिया से जीव में आंतरिक आग्रहों के माध्यम से या अंगों के उपयोग और अनुपयोग के माध्यम से नए अनुकूली लक्षणों का विकास होता है। ऐसे लक्षणों को किसी जीव के जीवन-काल के दौरान विकसित किया जाता है जिन्हें, उपार्जित लक्षण कहा जाता है। जो इसके तत्काल पूर्वजों में नहीं पाए जाते हैं। एक जीव के जीवन-काल में प्राप्त किए गए नए पात्रों को संरक्षित किया जाता है और अगली पीढ़ी को प्रेषित किया जाता है। संतानों में यह संशोधन पर्यावरण के समान तनाव के संपर्क में आने पर अधिक स्पष्ट हो जाता है। इस प्रकार प्राप्त लक्षणों को एक प्रजाति में रूपात्मक और शारीरिक परिवर्तनों के लिए विरासत में मिला है (मल्टीलैंग्वेज डाक्युमेंट, तिथि अनिर्धारित)।''

- पर्यावरण की प्रतिक्रिया के रूप में नवीन आवश्यकताएं : नए अंग (लक्षण) एक नई आवश्यकता के परिणाम हैं। लैमार्क का मानना था कि पर्यावरण, जीवित जीवों के रूप व उनके बाहरी और आंतरिक अंगों को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रभाव से उनकी आदतों में बदलाव आता है। परिवर्तन से किसी अंग या संरचना की असामान्य गतिविधि होती है। एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जानवरों के प्रवास के मामले में पर्यावरण में परिवर्तन होता है और नई जरूरतों और आवश्यकताओं का परिचय होता है। लैमार्क ने कई मामलों का प्रदर्शन किया जहां एक ही प्रजाति के व्यक्ति, अलग–अलग पर्यावरणीय परिस्थितियों में विकसित हुए, चि ित अंतर प्रदर्शित किए।

- उपयोग और अनुपयोग : किसी अंग के निरंतर उपयोग से उसकी कार्यक्षमता और आकार बढ़ जाता है, जो उसे बेहतर विकास की ओर ले जाता है। इसके विपरीत यदि किसी अंग का लंबे समय तक उपयोग नहीं किया जाता है, तो इससे अंग की दक्षता और आकार में कमी हो जाती है और अंततः वह लुप्त हो जाता है। अपने सिद्धांत के समर्थन में, लैमार्क ने अंगों के उपयोग और अनुपयोग को समझाने के लिए जिराफ की लंबी गर्दन और सांपों में अंगहीनता जैसे उदाहरणों का हवाला दिया। लैमार्क ने अंगों के उपयोग के लिए जिराफ की लंबी गर्दन को निम्न प्रकार से समझायाः एक मूल हिरण जैसा जानवर, जब उसके वातावरण में पेड़ और जड़ी-बूटियों की आपूर्ति अपर्याप्त हुई तो उसने पेड़ों की पत्तियों पर निर्भर रहना शुरू कर दिया। ंची शाखाओं के पत्तों तक पहुचने की प्रक्रिया में गर्दन खिंच गई और अग्रभाग उभरे गए। गर्दन को लंबा करने की यह प्रक्रिया पीढ़ियों तक लम्बे पेड़ों के पत्तों तक पहुंचने के लिए जारी रही और परिणामस्वरूप गर्दन उनके अग्रभागों के साथ लंबी होती गई।

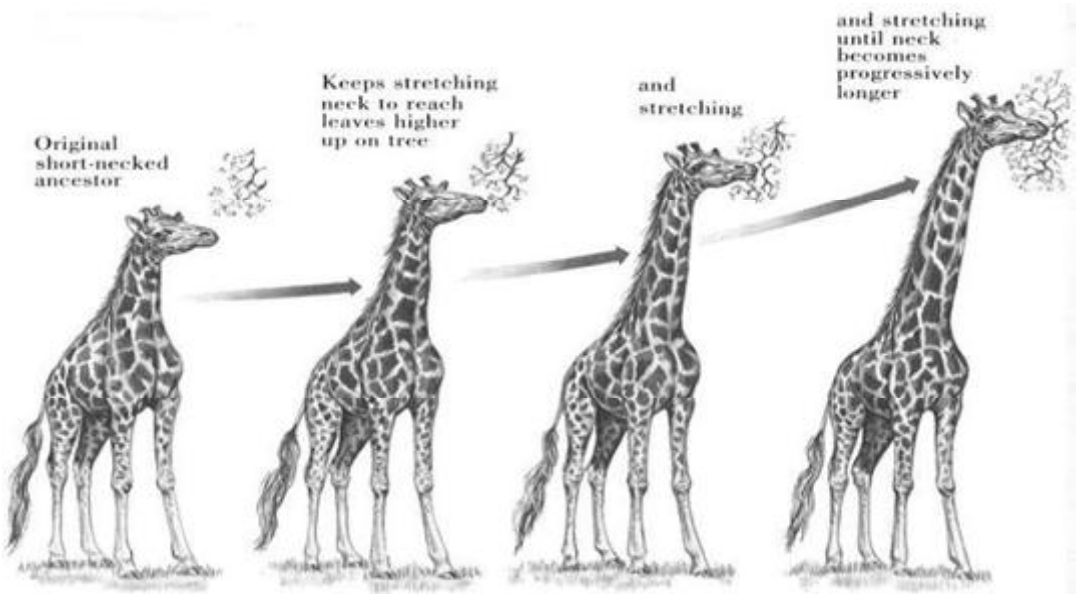

चित्र 3 : जिराफ की लंबी गर्दन

स्रोत : http://hawaiireedlab.com

अंगों के लुप्त होने के लिए एक उदाहरण साप में अंगहीनता है। सांपों के पूर्वज चार अंगों वाले जानवर थे। निश्चित समय में सांपों को बिल में रहने के लिए उन्हें रेंगने की आदत के अनुकूल बनाया गया। इस अनुकूलन के दौरान वे धीरे-धीरे अपने अंगों को खोते गए इसलिए वर्तमान में सांप बिना अवयव (अवांछनीय) अंगों के हैं।

6.1.1.3 लैमार्कवाद के अन्य उदाहरण

- जलीय पक्षियों में जालीदार पैरों का विकास, जैसे बतख में जालीदार पैर, तैराकी की आदत के कारण विकसित हुए। माना जाता है कि वे स्थलीय पूर्वजों से उत्पन्न हुए हैं।
- अपने उड़ने वाले पूर्वजों से ना उड़ सकने वाले पक्षियों का विकास। कीवी में उड़ानहीनता पंख और पंखों की कमी के कारण होती है।
- लोहारों के हाथों में उभरी मांसपेशियां (बाइसेप्स) जो उनके हाथों को भारी हथौड़े से लगातार चलाने से निर्मित होती हैं।
- अपेंडिक्स, मानव की पुच्छ कशेरूकाओं की उपस्थिति और मनुष्य में निक्टिटेटिंग झिल्ली का होना।

6.1.1.4 लैमार्कवाद की आलोचना

लैमार्किज्म सिद्धांत हको गंभीर आलोचना से सामना करना पड़ा क्योंकि उनके विकास के सिद्धांत में बहुत सारी आपत्तियां थी। सिद्धांतों में से एक, उपार्जित लक्षणों की वंशानुगति बहुत विवादित रही है। एक जर्मन जीवविज्ञानी अगस्त वीजमैन (1890) ने, चूहों पर अपने प्रयोगों के साथ उपार्जित लक्षणों की अवधारणा को गलत साबित किया। उन्होंने 20 से अधिक पीढ़ियों तक सफेद चूहों की पूंछ काट दी और अगली पीढ़ी में पूंछ की लंबाई देखी। सभी पीढ़ियों में पूंछ की लंबाई सामान्य पाई गई। इसलिए, उनका मानना था कि उपार्जित लक्षण विरासत में नहीं मिला था। वीजमैन ने प्रोटोप्लाज्म (जीवद्रव्य) को सोमाटोप्लाज्म और जर्मप्लाज्म में

विभेदित किया। सोमाटोप्लाज्म दैहिक कोशिकाओं में से है जबकि जर्मप्लाज्म (रोगाणु नाशक) लैंगिक कोशिकाओं में से हैं। जर्मप्लाज्म आनुवंशिकता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वीजमैन ने स्थापित किया कि जीव के दैहिक कोशिकाओं में होने वाले परिवर्तन संचरित नहीं होते हैं। केवल जर्मप्लाज्म में होने वाले परिवर्तन हस्तांनातरित होते हैं। उनका मानना है कि आकार में वृद्धि की प्रवृत्ति, कई रूपों में दर्ज की गई है, लेकिन कई बार उद्विकास में आकार में कमी भी परिलक्षित होती है। इसके अतिरिक्त, जो व्यक्ति लगातार पढ़ने और लिखने में व्यस्त रहते हैं और दूसरों की तुलना में अपनी आखों का उपयोग करते हैं, उनमें अक्सर बिगड़ा हुआ दृष्टि रूप पाया जाता है।

उनकी आंखें अधिक कुशल क्यों नहीं बनतीं लैमार्क की वह अवधारणा कि नए अंग तभी विकसित होते हैं जब जीवों को लगता है कि उन्हें उसकी आवश्यकता हैं' की भी आलोचना का सामना करना पड़ा। यदि नए अंग या संरचना का विकास इच्छा पर निर्भर करता है, तो पक्षी की तरह उड़ने के लिए लंबे समय से इच्छुक व्यक्ति ने पंखों का विकास क्यों नहीं किया।

6.1.2 नव-लैमार्कवाद

लैमार्कवाद पहली वैज्ञानिक धारणा है जिसने अनुकूलन को पर्यावरण के विकास के प्राथमिक उत्पाद के रूप में मान्यता दी। लैमार्क के अनुयायियों जैसे कोप, स्पेन्सर, पैकर्ड, कम्मेर आदि ने लैमार्क को संशोधित करने का प्रयास किया और इसे स्वीकार्य किया। लैमार्कनाद के इस संशोधित संस्करण को नव-लैमार्कवाद कहा जाता है। इन नव-लैमार्कवादियों ने माना कि अनुकूलन सार्वभौमिक हैं। दैहिक कोशिकाओं को प्रभावित करने वाली पर्यावरणीय स्थितियों में अनुकूलन के कारण जीव नई संरचनाए उपार्जित करते हैं। दैहिक कोशिकाओं में होने वाले बदलाव अगली पीढ़ी में वंशानुगत होते हैं। नव-लैमार्कवादियों ने उपार्जित लक्षणों के पक्ष में कई उदाहरण प्रदान किए।

प्रोटियस एनगाइनस जो एक उभयचर है, अंधेरी गुफाओं में रहता है जहां प्रकाश नहीं पहुचता है। इसलिए यह रंगहीन होते हैं और उनकी आखें अल्पविकसित होती हैं। लैमार्क के अनुयायियों में से एक कम्मेर ने इस जानवर को दिन के उजाले में रखा और पाया कि जानवर में धीरे-धीरे काली त्वचा और सामान्य आखें विकसित हुईं। ये दैहिक चरित्र अगली पीढ़ी में वंशानुगत भी हुए।

एक अन्य प्रयोग जिसमें ग्रिफिथ और डेटेलियोफज्म ने चूहों पर प्रयोग किया और कई महीनों तक रोटेटिंग टेबल पर चूहों को रखा गया, रोटेशन बंद करने के बाद भी चूहों में चक्कर आने के संकेत दिखाई दिए और संतानों में भी चक्कर आने का प्रदर्शन हुआ।

नव-लैमार्कवाद आंतरिक बल, भूख और अंगों के उपयोग और अनुपयोग जैसे कारकों को कोई महत्व नहीं देता है। यह सिद्धांत जीवों पर बदले हुए पर्यावरण के प्रत्यक्ष प्रभाव पर जोर देता है। इसने स्थापित किया कि केवल उन्हीं संशोधनों को अगली पीढ़ी को हस्तांतरित किया जाता है, जो रोगाणु कोशिकाओं को प्रभावित करते हैं या जहां दैहिक कोशिकाएं बीज (जर्म) कोशिकाओं को जन्म देती हैं।

लैमार्कवाद अपने आप में अधूरा था, वह विकासवादी परिवर्तनों के सभी मामलों की व्याख्या करने में असमर्थ था, लेकिन कुछ हद तक यह उचित था क्योंकि जीवों के शरीर की प्र ति केवल एकल गुण से नहीं होती बल्कि आनुवांशिक कारकों (जीन) और पर्यावरण की स्थिति के परस्पर क्रिया का परिणाम है।

अपनी प्रगति को जाचें

3) लैमार्क के विकासवाद के सिद्धांत को लोकप्रिय रूप से जाना जाता है:
   क) उत्तम की उत्तरजीविता (स्ट्रगल फॉरी इक्जिस्टेंस)
   ख) उपार्जित लक्षणों की वंशानुगति
   ग) ओरिजिन ऑफ न्यू स्पीशीज
   घ) नेचुरल सलेक्शन

4) लैमार्क के उद्विकास सिद्धांत को किसमें प्रकाशित किया गया था:
   क) सिस्टमा नेचुरी
   ख) ओरिजन ऑफ न्यू स्पीशीज
   ग) फिलॉसिफक जूलोजिक
   घ) द डिंसेट ऑफ मैन

5) लैमार्क के सिद्धांत को खंडित करने के लिए कई पीढ़ियों तक सफेद चूहों की पूंछ काटने का प्रयोग किसने किया
   क) चार्ल्स डार्विन
   ख) हर्बर्ट स्पेन्सर
   ग) अगस्ट बीजमैन
   घ) जे बी एस हल्दाने

6.1.3 डार्विनवाद

चार्ल्स रॉबर्ट डार्विन (1809–1882) एक अंग्रेज प्र तिवादी थे, जिन्हें 1831 में ब्रिटिश सरकार के एक विश्व सर्वेक्षण पर जाने वाले एच. एम. एस. बीगल जहाज पर एक प्र तिवादी के रूप में नियुक्त किया गया था। पाच वर्षों (1831 से 1836) की अपनी यात्रा के दौरान उन्होंने कई महाद्वीपों और द्वीपों के जीवों और वनस्पतियों की खोज की, जिनमें से गैलापागोस द्वीप समूह महत्वपूर्ण हैं। प्रा तिक चयन द्वारा नई प्रजातियों के विकास के विचार ने उन्हें प्रभावित किया और इस आधार पर डार्विन ने वर्ष 1859 में ओरजिन ऑफ स्पीशीज बाई नेचुरल सलेक्शन' नामक पुस्तक प्रकाशित की।

चित्र 4 : चार्ल्स डार्विन (1809 -1882)

स्रोत : https://en.wikiquote.org/wiki/Charles_Darwin

चार्ल्स डार्विन (1809-1882) एक विकासवादी जीवविज्ञानी थे। उनके द्वारा प्रस्तावित विकासवादी सिद्धांत डार्विनवाद' कहा जाता है। डार्विन तीन प्रकाशित विचारों से बहुत प्रभावित थे–

- 1798 में माल्थस के निबंध, जिसका शीर्षक ऑन द प्रिंसिपल ऑफ पापुलेशन' है, इसमें स्पष्ट किया गया कि आबादी ज्यामितीय रूप से बढ़ती है और खाद्य स्रोत अंकगणितीय वृद्धि करते हैं
- सर चार्ल्स लियेल द्वारा लिखित पुस्तक प्रिंसिपल्स ऑफ जियोलॉजी' शीर्षक से जिसने क्रमिकतावाद को समझाया (पृथ्वी क्रमिक रूप से और धीरे–धीरे युगों के माध्यम से बदल गई है) और एकरूपतावाद (मौलिक कानून आज भी पृथ्वी पर उसी तरह से संचालित होते हैं जैसे अतीत में थे), और
- अल्फ्रेड रसेल वालेस द्वारा उन्हें भेजे गए ऑन द टेन्डेंसी ऑफ वैराइटीज टू डिपार्ट फ्रॉम ओरिजनल टाइप' शीर्षक वाले आधिकारिक शोध पत्र से।

डार्विन ने 1858 में लिनियन सोसाइटी में ओरिजिन ऑफ स्पीशीज' नामक पत्र में अपने सिद्धांत का सारांश प्रस्तुत किया। 1859 में, डार्विन ने अपनी पुस्तक द ओरिजिन आफ स्पीशीज बाई नेचुरल सलेक्शन' में विस्तार से अपने निष्कर्ष प्रकाशित किए।

प्रा तिक चयन का डार्विन का सिद्धांत निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित है:

1) अधिक उत्पादन : इस सिद्धांत को उत्पादन की अधिकता भी कहा जाता है। प्रत्येक जीव ज्यामितीय अनुपात में अपनी जनसंख्या को बढ़ाता है। जीव अधिक संख्या में संतान पैदा करते हैं जो जीवित रहने और प्रजनन करने में सक्षम होंगे। प्रत्येक प्रजाति की आबादी लगभग स्थिर रहती है क्योंकि प्रजनन करने में सक्षम होने से पहले बड़ी संख्या में जीव मरते भी हैं। भोजन और अन्य स्रोत जनसंख्या वृद्धि की समान दर में वृद्धि नहीं करते हैं (थियरी ऑफ इवोलूशन, तिथि अनिर्धारित)।

2) विभिन्नताएं: विभिन्नता सभी जीवों की विशेषता है। विविधता उपयोगी या हानिकारक हो सकती है। उपयोगी विविधताएं अनुकूल हैं और अगली पीढ़ी को वंशानुगत होती हैं। हानिकारक भिन्नता अस्तित्व के संघर्ष में जीव को अयोग्य बनाती है। लाभकारी भिन्नताए प्र ति की पक्षधर हैं। इस तरह की विविधताएं विकास के लिए कच्चा माल बन जाती हैं और जीव को अस्तित्व के लिए संघर्ष में सक्षम बनाती हैं जिससे इस तरह से संतान के जीवित रहने की संभावनाएं बेहतर होती है (थियरी ऑफ इवोलूशन, तिथि अनिर्धारित)।

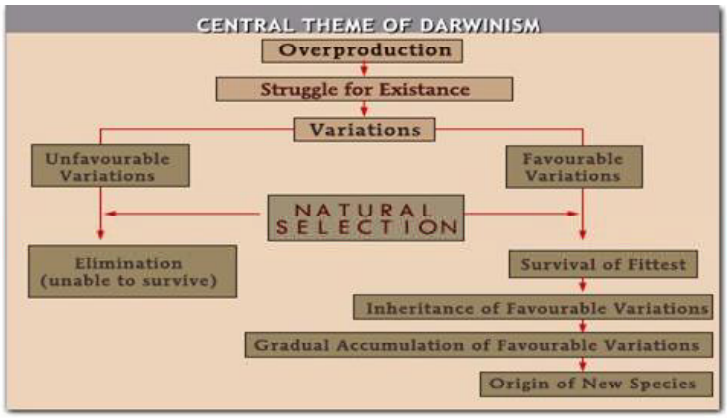

चित्र 5 : डार्विनवाद का केंद्रीय विषय

स्त्रोत : https://www.tutorvista.com

3. अस्तित्व के लिए संघर्ष : सभी जीव ज्यामितीय अनुपात में प्रजनन करते हैं, लेकिन भोजन और स्थान में समान रूप से वृद्धि नहीं होती है। जीव को अस्तित्व के लिए प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। डार्विन ने इसे अस्तित्व के लिए संघर्ष कहा। संघर्ष तीन प्रकार के होते हैं:

- z अंतर्विरोधी संघर्ष
- z अंतर्जातीय संघर्ष और
- z पर्यावरण के साथ संघर्ष

अंतर्विरोधी संघर्ष – यह एक ही प्रजाति के जीवों के बीच पाया जाने वाला संघर्ष है। यह संघर्ष भोजन और संभोग के लिए है। यह प्रजनन की दर को स्पष्ट करता है।

अंतर्जातीय संघर्ष – विभिन्न प्रजातियों के जीवों के बीच के संघर्ष को अंतर्जातीय संघर्ष कहा जाता है। भोजन के लिए संघर्ष अंतर्जातीय सघर्ष का सबसे अच्छा उदाहरण है।

पर्यावरण के साथ संघर्ष – अस्तित्व के लिए जीवों का पर्यावरण के साथ होने वाले संघर्ष को पर्यावरणीय संघर्ष कहा जाता है। जीव–जंतु पर्यावरणीय कारकों जैसे भोजन, शीत लहरों, ष्मा तरंगों, भूकंप आदि से जूझते हैं।

4) प्रा तिक वरण या योग्यतम की उत्तरजीविता: लाभकारी विविधताओं वाले जीव जीवित रहेंगे और कम योग्य और प्रतिकूल विविधताओं वाले जीव कालान्तर में लुप्त हो जाएंगे। प्र ति द्वारा चुने गए जीवों को सबसे योग्य कहा जाता है। योग्यतम के अस्तित्व का यह विचार हर्बर्ट स्पेंसर द्वारा प्रतिपादित किया गया था। भिन्नताए जो किसी विशेष वातावरण में व्यक्ति के लिए उपयोगी होती हैं, उस व्यक्ति की प्रजनन क्षमता और प्रजनन योग्य संतानों का अस्तित्व बनाए रखती है।

कम अनुकूल विविधताएं जीवों को लाभ नहीं पहुंचाती और जीवों का अस्तित्व बनाए रखने के लिए इनका प्रजनन करना कम सफल होता है। जीवों के बीच विभेदक प्रजनन योग्यताएं मौजूद है। विभिन्न रूपों की अंतर-प्रजनन सफलता की अवधारणा अधिक सटीक है जो समय के साथ, सफलता की कसौटी व प्रजनन सफलता है। जो जीव पुनः नए जीवों को उत्पन्न करने में विफल रहता है भविष्य की पीढ़ियों में उनका प्रतिनिधित्व नहीं होता है। भले ही वह अस्तित्व के संघर्ष में योग्य हो जाएं (थियरी ऑफ इवोलूशन, तिथि अनिर्धारित)।

5) नई प्रजातियों की उत्पत्ति : जीवों में अधिक उत्पादन के कारण, जीवन के अस्तित्व के लिए संघर्ष होता है। जबकि अनुकूल में विविधताओं के साथ जीवित रहने वाले जीव पर्यावरण के लिए बेहतर रूप से अनुकूलित होते हैं। विविधताओं के कारण और प्र ति द्वारा चुने गए सभी संशोधन पीढ़ी-दर-पीढ़ी तब तक हस्तांतरित होते हैं, जब तक कि एक ऐसी पीढ़ी ना आ जाए, जो अधिक अनुकूलित हों और जिसमें जीवित रहने की संभावना अधिक होती हैं (थियरी ऑफ इवोलूशन, तिथि अनिर्धारित)। इस प्रकार एक नई प्रजाति कई पीढ़ियों में अनुकूल विविधताओं के क्रमिक संचय से उत्पन्न होती है।

डार्विन ने माना कि एक स्थायी प्रजातीय परिवर्तन उतार-चढ़ाव वाली विविधताओं का उत्पाद है। उनका यह भी मानना था कि उद्विकास अचानक घटने वाली जैविक घटना के बजाय क्रमिक होता है। इस प्रकार, प्रा तिक चयन के अनुसार, नई प्रजातियों की उत्पत्ति विविधता में उतार-चढ़ाव के संचयी प्रभाव के कारण होती है।

6.1.3.1 प्रा तिक चयन का प्रायोगिक सत्यापन -औद्योगिक अति ष्णता (मेलेनिनता)

प्रा तिक चयन का एक प्रमुख और महत्वपूर्ण उदाहरण जंगल में पाये जाने वालें पेप्पर्ड ग्रे (हल्का कत्थई या भूरे) रंग के कीट/पतंग बिस्तो बेटुलरिया का मामला है जो पूरे इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति से पहले प्रचुर मात्रा में था। इस कीट के दो काले और भूरे रंगों वाली प्रजाति थी। औद्योगिक काल में विशेषकर बर्मिंघम जैसे औद्योगिक शहरों में काले रंग के इस कीट की अधिकता थी जबकि धूसर (ग्रे रंग) रूप के कीट कम थे। जीवविज्ञानियों ने पेप्परेड पतंगे की आबादी में इस बदलाव को औद्योगिक क्रांति के कारण होने वाले प्रदूषण के कारण माना। औद्योगिक क्रांति से पहले ग्रे पतंगे पेड़ों की हल्की छाल में छुप जाने में सफल हो जाता था। औद्योगिक क्रांति के साथ कोयले के जलने के कारण अधिक कालिख निकली। पेड़ की छाल काली हो गई। धूसर रंग के कीट की पहचान आसानी से हो जाती थी और वे पक्षियों से ज्यादा शिकार होते थे। ग्रे कीटों की संख्या कम हो गई और आबादी में काले कीट बढ़ गए। प्रा तिक चयन ने मेलानिक पतंगे को अधिक सफलतापूर्वक पुनः संतान उत्पन्न करने में मदद की। औद्योगिक प्रदूषण की प्रतिक्रिया में गहरे रूपों के प्रा तिक चयन को औद्योगिक मेलानिज्म के रूप में जाना जाता है (थियरी ऑफ इवोलूशन, तिथि अनिर्धारित)।

अपनी प्रगति को जाचें

6) ओरिजिन ऑफ स्पीसीज बाई नेचुरल सलेक्शन'' पुस्तक किसने लिखी है

   क) चार्ल्स डार्विन

   ख) जीन-बैप्टिस्ट लैमार्क

   ग) अलेक्जेंडर ओपरिन

   घ) जे.बी.एस. हल्दाने

7) टी आर माल्थस ने एक निबंध लिखा :

   क) भूविज्ञान के सिद्धांत

   ख) आबादी पर

   ग) मूल स्थान से प्रस्थान करने की किस्मों की प्रवृत्ति पर

   घ) जनसंख्या की अवधारणा पर

8) औद्योगिक प्रदूषण की प्रतिक्रिया में गहरे पतंगे का प्रा तिक चयन निम्नानुसार है :

   क) औद्योगिक प्रदूषण

   ख औद्योगिक मेलानिज्म

   ग) औद्योगिक चयन

   घ) औद्योगिक क्रांति

6.1.4 उत्परिवर्तन के सिद्धांत

वर्ष 1900 में ूगो डी ब्रीज ने उद्विकासवाद के एक नए सिद्धांत को प्रतिपादित किया, जिसे उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) सिद्धांत के रूप से जाना जाता है। इस नए सिद्धांत ने प्रा तिक चयन को विकास के प्राथमिक बल के रूप में नहीं माना। बल्कि यह उत्परिवर्तन को विकास का मुख्य कारक मानते हैं। उत्परिवर्तन को जीव में परिवर्तन के लिए अग्रणी जीन का सहज परिवर्तन कहा जाता है और यह बदले में नई प्रजातियों को जन्म देता है। नई प्रजाति की उत्पत्ति अचानक और बिना किसी तैयारी के होती है। उत्परिवर्तनवादियों का मत था कि ज्यादातर वंशानुगत चर स्वभावतः सुस्त या बंद होते थे, इन्हें मेंडल के नियमों द्वारा समझाया जा सकता है। इस मामले में उद्विकास प्रभावी होगा, यदि चयन बड़े उत्परिवर्तन द्वारा होता है।

उत्परिवर्तनवादियों के विपरीत, कार्ल पियर्सन के नेतृत्व में बायोमेट्रिक ने डार्विन के दृष्टिकोण का समर्थन किया और तर्क दिया कि उद्विकास का प्रमुख कारण प्रा तिक चयन था। उन्होंने कहा कि छोटे अंतर पर चयन अभिनय विकासवादी परिवर्तन के लिए प्राथमिक तंत्र था। हार्डी-वेनबर्ग के संतुलन (1908) की स्वी ति के बाद, गणितीय मॉडल विकसित किए जाने लगे और जनसंख्या आनुवंशिकी नामक एक नया क्षेत्र उभरा। इस क्षेत्र का विकास काफी हद तक टी. एच. डोबजानस्की, आर ए फिशर, एस राइट और जे.बी.एस. हाल्डेन जैसे वैज्ञानिकों के प्रयासों के कारण हुआ।

6.1.5 आधुनिक संश्लेषित सिद्धांत

जनसंख्या आनुवंशिकी के उद्भव के परिणामस्वरूप प्रा तिक चयन में आनुवंशिकी के एकीकरण के लिए एक रूपरेखा विकसित हुई। इसके बाद उत्परिवर्तन सिद्धांत का पतन हुआ और आधुनिक संश्लेषित (सिंथेटिक) सिद्धांत की कल्पना की गई। 20वीं शताब्दी के मध्य तक विकासवादी जीवविज्ञानियों ने सार्वभौमिक रूप से इस एकीकरण को स्वीकार किया और सिंथेटिक सिद्धांत को व्यापक रूप से अपनाया। वीजमान और वालेस के नियो-डार्विनियन अवधारणा के विपरीत, सिंथेटिक थ्योरी में आनुवांशिकी, सिस्टमैटिक्स और जीवाश्म विज्ञान जैसे क्षेत्रों के तथ्य शामिल थे। इसलिए नियो-डार्विनियन सिद्धांत शब्द' सिंथेटिक सिद्धांत (या वाक्यांश नियो-डार्विनियन संश्लेषण) के साथ भ्रमित नहीं होना चाहिए। सिंथेटिक थ्योरी के मूल सिद्धांत ओडोसियस डोबजन्स्की (1900-1975), अर्नस्ट मेयर (जन्म 1904), जूलियन हक्सले (1887-1975), जॉर्ज जी सिम्पसन (1902-1984), बर्नहार्ड रेनश (1900-1990) और जी लेयार्ड स्टैबिंस (1906-2000) ने दिए।

आधुनिक सिंथेटिक सिद्धांत के समर्थकों ने जनसंख्या पर जोर दिया न कि व्यक्तिगत स्तरों पर। यह पाया गया कि प्रा तिक आबादी में काफी मात्रा में आनुवांशिक विविधता दिखाई देती है इसमें यही प्रा तिक चयन इन विविधताओं पर कार्य करता है। इसलिए जनसंख्या में समय और स्थान के माध्यम से उद्विकासवादी आनुवंशिक परिवर्तनों की व्याख्या करने के लिए परिवर्तनशीलता की आवश्यकता थी। आधुनिक सिंथेटिक सिद्धांत ने निम्नलिखित पहलुओं पर विचार आकर्षित किया है:

- उत्परिवर्तन आधुनिक सिंथेटिक सिद्धांत का आधार निर्मित करता है। ये एक यादृच्छिक तरीके से होता है जो कि आनुवंशिक परिवर्तनशीलता को आरंभ करके उद्विकास के लिए जरूरी संसाधन उपलब्ध कराता है।

- प्रवास, संस्थापक प्रभाव, यादृच्छिक आनुवंशिक बहाव और संकरण अन्य कारक हैं।
- सिंथेटिक सिद्धांत जैविक प्रजातियों' की अवधारणा है जिसे 1942 में मेयर द्वारा प्रस्तावित किया गया है।
- डोबजन्स्की द्वारा परिभाषित अलगाव विकासवादी प्रक्रिया का वह चरण (जिस पर) जीव – अंतर प्रजनन के लिए अक्षम हो जाते हैं''। जिसके कारण पूर्व और बाद के समागम (मैथुन) से उत्पन्न अलगाव तंत्र भी प्रस्तावित किए गए हैं।

क्रमिक उद्विकास को छोटे आनुवंशिक परिवर्तनों (उत्परिवर्तन) और पुनर्संयोजन और प्रा तिक चयन द्वारा आनुवांशिक विविधता के द्वारा समझाया जा सकता है। ऐसा पाया गया है कि उद्विकासवादी घटनाएं, विशेष रूप से मैक्रो-विकासवादी प्रक्रियाओं को एक ऐसे तरीके से समझाया जा सकता है जो ज्ञात आनुवंशिक तंत्र के अनुरूप हो।

अपनी प्रगति को जाचें

9) उत्परिवर्तन का सिद्धांत किसने दिया :

क) ूगो डे व्रीज

ख) अर्नस्ट मेयर

ग) जूलियन हक्सले

घ) बर्नहार्ड रेन्श

10) छोटे आनुवंशिक परिवर्तनों (उत्परिवर्तन') और पुनर्संयोजन व प्रा तिक चयन द्वारा आनुवांशिक भिन्नता से क्रमिक विकास को समझाया जा सकता है। यह कथन परिभाषित करता है:

क) नव लैमार्कवाद

ख) डार्विनवाद

ग) उत्परिवर्तन सिद्धांत

घ) आधुनिक सिंथेटिक सिद्धांत

11) जैविक प्रजातियों की अवधारणा को किसके द्वारा प्रस्तावित किया गया था:

(अ) अर्नस्ट मेयर

(ब) थियोडोसियस डोबजानस्की

(स) जूलियन हक्सले

(द) बर्नहार्ड रेन्श

6.2 सारांश

उद्विकास' शब्द का अर्थ, जीवन के अधिक जटिल रूपों को सरल या पूर्व रूपों से विकसित करना है। जैविक विकास को समझने के लिए विभिन्न सिद्धांत हमारे सामने हैं लेकिन जैविक उद्विकास की व्याख्या करने वाले महत्वपूर्ण सिद्धांत हैं, लैमार्कवाद, डार्विनवाद, उत्परिवर्तन

सिद्धांत और सिंथेटिक सिद्धांत हैं। लैमार्कवाद ने मुख्य रूप से प्राप्त वर्णों के वंशानुक्रम और अंगों के उपयोग और अनुपयोग के बारे में बताया। डार्विनवाद में उत्पादन, अस्तित्व के लिए संघर्ष और योग्यतम की उत्तरजीविता जैसे सिद्धांत शामिल हैं। उत्परिवर्तन सिद्धांत ने प्राकृतिक चयन को विकास के सिद्धांत बल के रूप में नहीं माना, बल्कि यह उत्परिवर्तन को विकास का मुख्य प्रस्तावक मानता है। विकासवाद का सिंथेटिक सिद्धांत ही डार्विनवाद के प्रा तिक चयन और मेंडिलियन आनुवंशिकी का संयोजन है। आधुनिक आनुवंशिकी के विकास के कारण माता-पिता और संतानों के बीच जीन आवृत्तियों में परिवर्तन व विकास का अध्ययन किया जा सकता है। इसलिए सिंथेटिक सिद्धांत का अध्ययन उत्परिवर्तन, प्रा तिक चयन और अलगाव की सहायता से किया जा सकता है।

6.3 सन्दर्भ सूची

गोल्डबर्ग डी., एंड गोंल्डबर्ग डी. टी., (2009). *सैट सबजेक्ट टेस्ट बायोलॉजे*. ई / एम, बैरोनर्स एजुकेशनल सीरीज.

मोंडल, पी. (तिथि अनिर्धारित). आर्गैनिक इवोल्यूशनः 9 मैन एविडेंसेस ऑफ ऑर्गेनिक इवोल्यूशन. एक्सेस्ड ऑनः 17 मई 2018. प्राप्त किया http://www-yourarticlelibrary-com/biology/organic&evolution&9&main&evidences&of&organic&evolution/13238-

मल्टी लैंग्वेज डॉक्यूमेंट (तिथि अनिर्धारित). विकास की प्रक्रिया जीवों का धीमा और क्रमिक संशोधन है जिसके द्वारा जीव के एक आदिम रूप को वंश के माध्यम से संशोधित किया गया और ताकि उन्नत रूप में वर्तमान स्थितियों में पहुंच सकें। प्राप्त किया https://vdocuments-site/process&of&evolution&is&the&slow&and&gradual&modification&of&organisms& by&which-html

लैमार्कवाद फ्रॉम ओई (तिथि अनिर्धारित). एक्सेस्ड ऑन 12 मई 2018. प्राप्त किया https://docslide-com-br/documents/lamarckism&from&oe

थिअरी ऑफ इवोलूशन (तिथि अनिर्धारित). एक्सेस्ड ऑन 13 मई 2018. प्राप्त किया https://lpuguidecom-files-wordpress-com/2016/10/16792_theories&of&evolution-pdf-

6.4 आपकी प्रगति की जाचने के लिए उत्तर

उत्तर 1 (क), 2 (ख)

उत्तर 3 (ख), 4 (ग), 5 (ग)

उत्तर 6 (क), 7 (ख), 8 (ख)

उत्तर 9 (क), 10 (ग), 11 (क)

इकाई 7 उद्विकास की बुनियादी अवधारणाएं *

इकाई की रूपरेखा

7.0 परिचय

7.1 परिभाषा

7.2 उद्विकास की मूल अवधारणा

7.3 जाति उद्भवन (स्पेसिअशन)

7.3.1 विस्थानीय जाति उद्भवन या भिन्न देशीय जाति (एलोपेट्रिक स्पीसिएशन)

7.3.2 पैरापट्रिक स्पीसिएशन

7.3.3 समस्थानिक जाति उद्भवन या एकदेशीय जाति

7.3.4 क्वांटम स्पीसिएशन

7.4 अपरिवर्तनशीलता (इर्रिवर्सएबिलिटी)

7.5 समानानंतरवाद और अभिसरण

7.6 अनकूली विकिरण

7.7 विलुप्तता

7.7.1 छद्म विलुप्तता

7.8 सारांश

7.9 सन्दर्भ

7.10 आपकी प्रगति जाचने के लिए उत्तर

अधिगम उद्देश्य

इस इकाई के माध्यम से आप उद्विकास के निम्न सिद्धांतों को समझने में सक्षम होंगे:

- जाति उद्भवन (स्पीसिएशन)
- अपरिवर्तनशीलता (इर्रिवर्सएबिलिटी)
- समानानंतरवाद और अभिसरण
- अनुकूली विकिरण तथा
- विलुप्तता।

7.0 परिचय

शारीरिक मानव विज्ञान के अध्ययन के दो प्रमुख पहलू: मानव उद्विकास और मानव विभिन्नता हैं। मानव उद्विकास मानव के अपने पूर्वजों से होमो सेपियन्स तक का विकास है, जबकि

* प्रो. रश्मि सिन्हा, मानव विज्ञान संकाय, समाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली.

मानव भिन्नता उन अंतरों को संदर्भित करती है जो व्यक्तिगत आबादी के बीच मौजूद हैं। मानव विज्ञानी सांस्कृतिक और जैविक दोनों भिन्नताओं को समझने में रुचि रखते हैं।

आइए सबसे पहले समझाते हैं कि उद्विकास क्या है, क्योंकि वर्तमान इकाई विकास के सिद्धांतों से संबंधित है। पृथ्वी पर सभी का जीवन एक समान वंश में उत्पन्न हुआ, एक अंतिम सार्वभौमिक पूर्वज, जो लगभग 3.5 से 3.8 बिलियन वर्ष पहले रहते थे (डुलिटल, 2000, ग्लान्सडॉर्फ एवं अन्य, 2008)।

पृथ्वी पर जीवन के उद्विकासी इतिहास के दौरान, नई प्रजातियों का बार-बार बनना (जाति उद्भवन), प्रजातियों के भीतर परिवर्तन (एनाजेसिस), और प्रजातियों की हानि (विलुप्त होने) को साझा डीएनए अनुक्रम सहित रूपात्मक और जैव रासायनिक लक्षणों के साझा समूह के माध्यम से पता लगाया जा सकता है। ये साझे लक्षण उन प्रजातियों के बीच अधिक समान हैं जो अधिक निकट समान पूर्वजों को साझा करते हैं। मौजूदा प्रजातियों और जीवाश्म प्रमाण दोनों का उपयोग करके उद्विकासवादी रिश्तों (फाइलोजेनेटिक्स) के आधार पर एक जैविक वंशवृक्ष (लाइफट्री)' को फिर से संगठित किया जा सकता है। जैव विविधता के मौजूदा पैटर्न को जीव उद्भवन और विलुप्तता दोनों ने आकार दिया (थियरी ऑफ इवोलूशन, तिथि अनिर्धारित)। हालाकि, इस ग्रह पर रहने वाली सभी प्रजातियों में से 99 प्रतिशत से अधिक विलुप्त होने का अनुमान है (स्टर्न्स एवं स्टर्न्स, 2000), वर्तमान में पृथ्वी पर जीवन की 10 से 14 मिलियन प्रजातियां हैं (मिलर एवं स्पूलमैन, 2012)।

डार्विन के उद्विकासी सिद्धांत प्रा तिक चयन सिद्धांत' के अनुसार, जीव लाभकारी उत्परिवर्ती को सिंचित करके उनके वातावरण के अनुकूल हो जाते हैं जिसका प्रभाव उनके दिमाग पर पड़ता था। वास्तव में जब डार्विन ने 19वीं शताब्दी के मध्य में अपने सिद्धांत की उत्पत्ति की, उस समय वंशानुगति और पैतृक विविधताओं की प्र ति अज्ञात थी। धीरे-धीरे लैमार्किवाद के दृष्टिकोण को स्वीकार करने के लिए उपार्जित लक्षणों की वंशानुगति ने उद्विकास में कु भूमिका निभाई। हालांकि, डार्विन के प्रा तिक चयन द्वारा उद्विकास को एक आधार रूपीण सिद्धांत के रूप में जीव विज्ञान की अन्य शाखाओं में भी स्वीकार किया गया। हक्सले, ब्रोका और डकवर्थ ने निस्संदेह मान्यता दी है कि, प्र ति में मनुष्य का स्थान प्राइमेट्स के बीच था और महान वानरों के सबसे करीब था।

समय में विसंगति के कारण बड़े पैमाने पर मानव उद्विकास का अध्ययन मानव आनुवंशिकी में स्वतंत्र रूप से उन्नत हुआ। 20वीं शताब्दी में मेंडल के काम का पुनर्वितरण देखा गया, जो विरासत की अवधारणाओं और तंत्र की व्याख्या करता है। इस प्रकार मील का पत्थर साबित होने वाली मेंडेलियन आनुवांशिकी की शुरुआत हुई। आधुनिक आनुवंशिक सिद्धांत यह प्रचारित करता है कि वंशानुगत और अवरोही आबादी के बीच उद्विकास, जीन (एलील) आवृत्तियों में परिवर्तन का परिणाम है। इन परिवर्तनों के लिए प्रा तिक चयन, उत्परिवर्तन, आनुवंशिक बहाव और प्रवास जिम्मेदार हैं। इस तथ्य के बावजूद कि विकास जीन में परिवर्तनों का परिणाम है, यह जीन आवृत्तियों में सीधे परिवर्तन को मापने के लिए व्यावहारिक रूप से व्यवहार्य नहीं है। इसलिए समय के माध्यम से जीवों की आ ति विज्ञान में परिवर्तन के रूप में उद्विकास को अनिवार्य रूप से देखा जाता है, और रूपात्मक समानता और अंतर का परिमाण (मात्रा) हमेशा उद्विकासवादी अध्ययन का हिस्सा रही है।

मानव विकास की समझ जारी है और वर्तमान में उद्विकासवाद के संश्लेषणात्मक सिद्धांत में कहा गया है कि उद्विकास इस तथ्य को प्रशस्त करता है कि जीवन के विविध और परिवर्तनशील रूपों का कार्यात्मक अनुकूलन, विविधता के निरंतर उत्पादन और प्रा तिक चयन के माध्यम से होता है।

7.1 परिभाषा

उद्विकासवादी प्रक्रियाएं जैविक संगठन के प्रत्येक स्तर पर विविधता को जन्म देती हैं, यह विविधता प्रजातियों के स्तर, व्यक्तिगत जीव और आणविक स्तर पर भी दिखाई पड़ती हैं (हॉल और हॉलग्रिमसन, 2008)। जीवन के ऐतिहासिक उद्विकास को निरूपित करने के लिए उद्विकास का पहली बार प्रयोग एक अंग्रेजी दार्शनिक हर्बर्ट स्पेंसर (1852) ने किया था। उद्विकास परिवर्तन है और समय के साथ जीव के भीतर होने वाले परिवर्तनों को सूक्ष्म-विकास' कहा जाता है। जबकि एक से दूसरे में परिवर्तन यानी रूपांतर को स्थूल-विकास' कहा जाता है। उद्विकास को कई प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है। पृथ्वी का भूवैज्ञानिक उद्विकास या ग्रहीय उद्विकास, सौर प्रणालियों का उद्विकास और ऑटोमोबाइल, रेडियो और टेलीफोन आदि का उद्विकास, इन परिवर्तनों को मानव सभ्यता या सांस्कृतिक विकास के उदय में शामिल किया गया। इसी तरह जैविक विकास' उन परिवर्तनों पर लागू होता है जो जीवित चीजों, पौधों और जीवों में हुए हैं। चार्ल्स डार्विन (1859) ने उद्विकास को संशोधन के साथ वंशज' के रूप में परिभाषित किया, अर्थात् निकटता से संबंधित प्रजातियां उनके वंशानुक्रम के कारण एक दूसरे से मिलती जुलती हैं, और अपने पूर्वजों के अलगाव के दौरान संचित वंशानुगत मतभेदों के कारण एक दूसरे से अलग दिखाई पड़ती हैं। लेकिन डोडसन एवं डोडसन (1976) के अनुसार, उद्विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा संबंधित आबादी एक दूसरे से अलग हो जाती है जिससे नई प्रजातियों (या उच्च समूहों) को जन्म दिया जाता है। जबकि, 1951 में डोब्जन्स्की ने कहा था कि विकास पैतृक और वंशज आबादी के बीच असमानताओं का उद्विकास है'।

7.2 उद्विकास की मूल अवधारणा

सन् 1800 के मध्य से पहले यह माना जाता था कि पृथ्वी पर जीवन की विविधता ईश्वर की पा और पूर्णता के कारण थी और हमने जो कुछ भी देखा वह ईश्वर की रचना थी, जो स्वाभाविक रूप से अपरिवर्तित रहती है। इस विचार से यह विश्वास पैदा हुआ कि सृजन का आधार केवल उसकी उत्पत्ति थी। इसके बावजूद भी विकासवादी सोच विकसित हुई, जीवाश्म खोजों से पता चला है कि समय के साथ जीवन बदल गया, कुछ वैज्ञानिकों ने माना कि जीवन समय के साथ विकसित हुआ और भूवैज्ञानिकों ने इस बात के साक्ष्य दिए कि पृथ्वी अत्यधिक पुरानी थी। यह पूर्व-डार्विन जीवविज्ञानी थे जिन्होंने उद्विकास के लिए तंत्र प्रस्तावित किया और अंततः डार्विन और वालेस (1858 और 1859) ने अपने लेखन के माध्यम से उद्विकास के तंत्र का प्रस्ताव रखा। जाति उद्भवन, अपरिवर्तनीयता, समानता और अभिसरण, अनुकूली विकिरण और विलुप्तता जैसे विभिन्न उद्विकासवादी सिद्धांत हैं जिन पर हम आगे चर्चा करेंगे।

7.3 जाति उद्भवन (स्पीसिएशन)

जाति उद्भवन उद्विकासवादी प्रक्रिया है। विभिन्न उद्विकासवादी सिद्धांतों के बीच जाति

उद्भवन' वह सिद्धांत है जिसके अनुसार नई जैविक प्रजातियों की उत्पत्ति होती है। कुक (1906) ने सर्वप्रथम वंशावली के विभाजन के लिए जाति उद्भवन' (स्पीसिएशन) शब्द को गढ़ने वाले पहले व्यक्ति थे। मेयर (1970) ने जाति उद्भवन (स्पीसिएशन) को प्रजातियों के निर्माण के रूप में परिभाषित किया। जाति उद्भवन (स्पीसिएशन) को एक से दो या अधिक प्रजातियों के निर्माण के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। इस बात ने उस विचार पर जोर दिया जिसके अनुसार पूर्ण उद्विकास उनके पूर्वजों के नई आबादी की उत्पत्ति पर निर्भर करता है। पर्याप्त संसाधनों की कमी के कारण उनमें से कई को विस्तार से समझना बहुत जटिल हो जाता है क्योंकि उनका मूल उनके पूर्वजों से है।

आइए हम पहले यह समझें कि प्रजाति क्या है प्रजातिया, जैविक वर्गीकरण और बुनियादी वर्गीकरण की बुनियादी इकाईयों में से एक है जिन्हें अक्सर जीवों के एक समूह के रूप में परिभाषित किया जाता है जो प्रजनन योग्य और प्रजनन सक्षम संतान पैदा करने में सक्षम होते हैं। अगला, जाति उद्भवन (स्पीसिएशन) प्रक्रिया कैसे होती है मेयर (1970) के अनुसार, प्रजातियों का सही अनुमान या गुणन निम्नलिखित एजेंसियों द्वारा हो सकता है:

- तात्कालिक जाति उद्भवन (स्पीसिएशन) (व्यक्तियों के माध्यम से), जो आंशिक या पूर्ण रूप से यौन प्रजातियों में आनुवंशिक या कोशिकीय (साइटोलॉजिकल) हो सकता है।
- क्रमिक जाति उद्भवन (आबादी के माध्यम से), जो भौगोलिक उद्भवन या समपैतृक जाति उद्भवन हो सकती हैं।

जाति उद्भवन के विषय में चार भौगोलिक प्र ति के आधार प्राप्त होते हैं जिसके आधार पर जाति उद्भवन का अनुमान लगाने वाले एक दूसरे से अलग होते हैं।

- एलोपेट्रिक या विस्थानीय
- पैरापट्रिक
- समस्थानिक
- क्वांटम

प्रत्येक का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है:

7.3.1 विस्थानीय जाति उद्भवन या भिन्न देशीय जाति (एलोपेट्रिक स्पेसिएशन)

एलोपेट्रिक (ग्रीक शब्द एलोसस जिसका अर्थ है अन्य पैट्रिक जिसका अर्थ है, पितृभूमि) उद्भवन को तो भौगोलिक जाति उद्भवन भी कहा जाता है। यह एक सामान्य प्रक्रिया है जिसके द्वारा नई प्रजातियां उत्पन्न होती हैं। जनसंख्या भौगोलिक रूप से अलग-थलग दो भौगोलिक आबादियों में विभाजित होती है जैसे, स्थलीय जीवों के लिए एक पर्वत श्रृंखला या नदी या जलीय जीवों के लिए एक भूमि, जो पशु के आवास पर निर्भर करती है। यह पृथक आबादी अलग-अलग चुनिंदा दबावों के कारण जीनोटाइपिक या फेनोटाइपिक विचलन का अनुभव करती हैं।

7.3.2 पैरापट्रिक स्पीसिएशन

जब छोटी आबादी पूरी तरह से नए निवास स्थान में प्रवेश करती है, तो जाति उद्भवन की इस पद्धति को पैरापट्रिक उद्भवन कहा जाता है। लेकिन फिर इन दो दिशाओं की आबादी

के बीच, क्षेत्रों का केवल आंशिक अलगाव होता है और प्रत्येक प्रजाति के व्यक्ति समय-समय पर संपर्क या आस-पास निवास में आ सकते हैं लेकिन विषम-युग्मनता की कम उपयुक्तता के कारण उस तरह के व्यवहार या तंत्र का चयन होता है जो उनके अंतर-प्रजनन को रोकता है।

7.3.3 समस्थानिक जाति उद्भवन या एकदेशीय जाति

दो या दो से अधिक वंशज प्रजातियां एक ही पूर्वज से बनती हैं जो एक ही भौगोलिक क्षेत्र पर कब्जा कर लेती हैं। इस प्रकार के जाति उद्भवन में एक छोटी राशि का जीन प्रवाह भी जनसंख्या के कुछ हिस्सों के बीच आनुवंशिक अंतर को मिटाने के लिए काफी होता है। अकशेरुकी जीवों के बीच समस्थानिक जाति उद्भवन के कई उदाहरण हैं, मुख्य रूप से कीटों में, जो एक ही क्षेत्र में विविध मेजबान पौधों पर निर्भर होते हैं।

7.3.4 क्वांटम जाति उद्भवन

ग्रांट (1971) ने क्वांटम जाति उद्भवन को एक क्रॉस निषेचन जीव में पैतृक प्रजातियों की अर्ध पृथक परिधीय आबादी से एक नई और बहुत अलग प्रजातियों के नवोदित' रूप में परिभाषित किया। यह पारिस्थितिक द्वीपों से घिरे आनुवांशिक परिवर्तनशीलता के निर्वहन द्वारा अनुकूली विकिरण के माध्यम से होता है। क्वांटम जाति उद्भवन तीव्र प्रक्रिया है, इसमें केवल कुछ पीढ़ियों की आवश्यकता होती है, वास्तव में यह केवल एक या कुछ व्यक्तियों से मिलकर हो सकता है। क्वांटम उद्भवन में, आनुवंशिक बहाव एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अपनी प्रगति को जाचें

1) उद्विकास से आप क्या समझते हैं

.....

.....

.....

.....

2) जाति उद्भवन क्या है उपयुक्त उदाहरणों के साथ उद्भवन के विभिन्न तंत्रों का वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

7.4 अपरिवर्तनशीलता (इर्रिवर्सएबिलिटी)

प्राइमेट उद्विकास के अध्ययन में अपरिवर्तनीयता एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। फ्रांस में जन्में, बेल्जियम के जीवाश्म विज्ञानी लुई डोलो ने 1893 में अपरिवर्तनीयता के सिद्धांत का प्रस्तावित किया। डोलो की अपरिवर्तनीयता का नियम या डोलो का नियम यह बताता है कि एक जीव वापस लौटने में असमर्थ है, यहां तक कि आंशिक रूप से पिछले चरण में भी, यह पहले से

ही अपने पूर्वजों की श्रेणी में स्पष्ट हो जाता है। इसका मतलब यह है कि एक संरचना जो विकास में अपना रूप बदलती है, वह अपने पहले के रूप में वापस नहीं आएगी। इसलिए एक बार जब कोई जानवर कई चरणों से गुजर रहा होता है, तो मूल पैतृक स्थिति में कोई उलट-फेर नहीं होता है। उड़ने वाले सरीसृपों को इसके उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। इन सरीसृपों के विलुप्त हो जाने के बाद, दो अलग-अलग वंशों के पक्षियों और स्तनधारियों में जीवन में उड़ने की प्रवृत्ति और पंखों और अनुकूलन हुआ।

7.5 समानानंतरवाद और अभिसरण

समान संरचनाएं, समान अनुकूल संबंध या जानवरों के असमान समूहों में होने वाले समान व्यवहार, समान उद्विकासवादी अवसरों के परिणामस्वरूप हैं। उद्विकासवादी जीवविज्ञान का मूल सिद्धांत यह है कि जब दो जीवों के कुल आकारिकी पैटर्न में एक समान समानता होती है तो उनके बीच एक तार्किक रूप से घनिष्ठ जातिवृत्तीय संबंध होता है। खैर, समानता की इस घटना के साथ होने वाली दुविधा यह है कि क्या ऐसी समानताएं समानांतर या अभिसरण के उदाहरण हैं या वे जीवों के बीच विकासवादी आत्मीयता का प्रमाण हैं समानांतरवाद और अभिसरण का अर्थ है कि घनिष्ठ जातिवृत्तीय संबंध मौजूद नहीं है।

- समानांतरवाद आमतौर पर संबंधित जानवरों में समान अनुकूली विशेषताओं के विकास तक सीमित है, जैसे कि एक ही क्रम से संबंधित जानवरों में समानांतर समानताएं भी हैं, सभी संभावना में एक आनुवंशिक क्षमता की मान्यता है जो पूरे समूह में मौजूद है। इसका एक उदाहरण तब हो सकता है जब एक प्रजाति कई नए क्षेत्रों में निवास करती हैं, जो पृथक होते हैं, लेकिन पर्यावरण की दृष्टि से एक दूसरे के समान होते हैं। इन वातावरणों में इसी तरह के चयनात्मक दबावों के परिणामस्वरूप समानताएं विकसित होती हैं जो इस प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं।

- दूसरी ओर अभिसरण दो पशु प्रजातियों या प्रमुख समूहों में अनुकूली संबंधों या संरचनाओं में समानता का विकास है जो निकटता से संबंधित नहीं हैं। उड़ने की क्षमता का लगातार उद्विकास अभिसरण उद्विकास का एक विशिष्ट उदाहरण है, चाहे वह उड़ने वाले कीड़े, पक्षी और चमगादड़ हों, सभी स्वतंत्र रूप से उड़ान की क्षमता विकसित करते हैं। इसलिए हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि उन्होंने इस उपयोगी विशेषता पर 'अभिसरण' किया है। हम इसे एक उदाहरण से समझते हैं, ऑक्टोपस की आंख में मानव आंख के समान जटिल संरचना होती है। हालांकि, इसे मानव नेत्र अध्ययन के लिए प्रतिस्थापित करना बहुत गलत होगा। यद्यपि दो प्रजातियों का उस समय विचलन हुआ जब जानवर कशेरुक और अकशेरुकी में विकसित हुए थे।

समानता के सभी मामलों को अभिसरण या समानांतर के रूप में वर्गी त करने का काम जटिल है। हम इसे इस प्रकार समझ सकते हैं। कशेरुक नेत्र में दो प्रकार के फोटोरिसेप्टर होते हैं: शलाका (छड़) और शंकु। शलाका अत्यधिक संवेदनशील होती है और इनमें बहुत कम प्रकाश की जरूरत होती है। हालांकि, इनमें भेदभाव की शक्ति कम होती है। दूसरी तरफ, शंकु प्रकाश की उच्च तीव्रता के प्रति संवेदनशील हैं और स्थानिक संबंधों, रंगों और बनावट के भेदभाव के उच्च स्तर होते हैं। उल्लुओं, चमगादड़ और लोरिस जैसे कई निशाचर कशेरुकी लोगों की आंखों में शलाका कोशिकाएं पाई गई हैं और मंद प्रकाश में रहने वाले कुछ जीव जैसे व्हेल, बिल्लियों और कुछ मछलियों में भी पाए जाते हैं। कठिनाई यह है कि इनमें से जिन

जानवरों में शलाका कोशिकाएं अभिसारी हैं तो क्या इनमें समानांतर विकास होता है इसलिए समानांतर और अभिसरण को हम कैसे परिभाषित करते हैं यह प्रमुख हो जाता है। जैसा कि नामकरण से स्पष्ट है कि अभिसरण तब दर्ज किया जाता है जब विभिन्न जानवरों में से प्रत्येक में शलाका कोशिकाएं विभिन्न संरचनाओं से उद्विकासवादी व्युत्पन्न हो उभरती हैं और यह समानांतर तब माना जाता है जब वे मूल कशेरुक नेत्र के समान भागों से प्राप्त होती हैं। पुराने जगत के बंदर और नए जगत के बंदर आज रहने वाले समूहों के बीच समानता का एक उत्कृष्ट उदाहरण पेश करते हैं, क्योंकि वे एक प्रोसिमियन पूर्वज से समानांतर में विकसित हुए प्रतीत होते हैं जो कि कम से कम 35 मिलियन साल पहले रहते थे। अभिसरण विकास के लिए एक उदाहरण ब्रैकिएशन है, जिनमें पेड़ों के माध्यम से हाथ पर हाथ से झूलते हुए गमन करने की क्षमता होती हैं, जैसा पुरानी दुनियां और नई दुनियां तथा कुछ वानरों के गमन में पाया जाता है।

जानवरों में विशेष संरचनाओं को चित्रित करने के लिए सजातीय और सामयिक शब्द अक्सर उपयोग किए जाते हैं। समरूप संरचनाएं वे हैं जो विकासवादी वंश और विचलन द्वारा संबंधित हैं: जैसे एक चमगादड़ का पंख और एक बंदर का अग्रभाग समरूप होते हैं – वे एक ही पैतृक संरचना से वंशज होते हैं। जबकि, एक चमगादड़ का पंख और एक तितली का पंख समान होते हैं। हालांकि उनके कार्य और रूप समान हो सकते हैं लेकिन फिर वे एक ही पैतृक संरचना से वंश द्वारा संबंधित नहीं हैं। शायद, समानता को समरूपतावादी उद्विकासवाद के रूप में देखना और अनुरूपी उद्विकास के रूप में अभिसरण को देखना हमें दो प्रक्रियाओं में अंतर करने में मदद करेगा।

7.6 अनुकूली विकिरण

उद्विकासवादी जीव विज्ञान में, अनुकूली विकिरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें जीव तेजी से नए रूपों की बहुसंख्या में विविधता लाते हैं। खासकर जब पर्यावरण में बदलाव, नए संसाधनों को उपलब्ध कराता है, नई चुनौतियां पैदा करता है और नई पर्यावरणीय शाखा निर्मित होती है (लार्सन, 2011, स्कैटर, 2000)। एक अनुकूली विकिरण की पहचान करने के लिए चार विशेषताओं का उपयोग किया जा सकता है:

- घटक प्रजातियों के उभयनिष्ठ या समान वंश: विशेष रूप से हाल ही के वंश। ध्यान देने कि बात यह है कि यह सभी एक स्रोत से उद्भवित (फेलेटिक) नहीं है, जिसमें एक सामान्य पूर्वज के सभी वंश शामिल हैं।
- एक समलक्षणी -पर्यावरण सहसंबंध : पर्यावरण, रूपात्मक और शारीरिक लक्षणों के बीच एक महत्वपूर्ण जुड़ाव स्थापित करता है जिससे उन वातावरणों का उपयोग किया जा सके।
- लक्षण उपयोगिता: उनके संगत वातावरण में गुण मानों का प्रदर्शन या फिटनेस लाभ।
- तीव्र जाति उद्भवन: उस समय के आसपास नई प्रजातियों के उद्भव में एक या एक से अधिक जीवों की विस्फोटक उपस्थिति जो पारिस्थितिक और समलक्षणीय विचलन करती है (एडेक्टिव रेडिएशन, तिथि अनिर्धारित)।

जब पर्यावरणीय परिवर्तनों के कारण जीवों के किसी भी विकसित समूह की संख्या और प्रकार में तेजी से वृद्धि होती है और अनुकूली विकिरण के कारण ग्रहों के रहने की जगह में कई

नए स्थानों का उपयोग किया जाता है तो इसका परिणाम जानवरों के विकसित समूह में हो सकता है, यह एक प्रजाति, एक गण (जीनस) और एक सुपर फैमली के स्तर का होता है। पर्यावरण में इन स्थानों को निचे (niches) और इको-निचे कहा जाता है। लेकिन, सिम्पसन (1953) के अनुसार, एक एकल पैतृक समूह से अनुकूली विकिरण द्वारा नई प्रजातियों का तेजी से प्रसार है। अनुकूली विकिरण में प्रजातियां उत्तरोत्तर भिन्न जीवों में विकसित होती हैं। कभी-कभी एक ही प्रजाति के वंशज कई अलग-अलग वातावरणों और अवसरों का लाभ उठाने के लिए विकसित होते हैं। अब बाहरी वातावरण में इस तेजी से बदलाव के परिणामस्वरूप विभिन्न जानवरों को एक ही पैतृक रूप से विकसित किया जा सकता है। एक विशेषता का विकास जो कई नई संभावनाओं को खोलता है, अनुकूली विकिरण को भी जन्म दे सकता है। अब हम स्तनधारियों के इतिहास द्वारा विकास के इस सिद्धांत को समझाते हैं।

भूवैज्ञानिक क्रांति के अनुसार मेसोजोइक युग (सरीसृपों की उम्र) के अंत और सेनोजोइक युग की तृतीयक अवधि की शुरुआत में, पहले से स्थिर मौसम का स्वरूप अस्थिर हो गया जिसके परिणामस्वरूप डायनासोर (जानवरों का एक समूह वर्गीकरण में, रूपात्मक और पारिस्थितिक दृष्टिकोण से) विलुप्त हो गए क्योंकि वे नए वातावरण में खुद को अनुकूलित नहीं कर पाए।

p

जबकि स्तनधारी कई अलग-अलग रेखाओं में विकसित हुए हैं, जैसे विशेष न्तकों को शिकार के लिए, शिकार के लिए मांसाहारी, चरने के लिए खुर वाले जानवर, पेड़ों के लिए प्राइमेट और स्लॉथ, व्हेल, सील और समुद्री घोड़ा को समुद्र में जीवन के लिए अनुकूलित किया गया, और चमगादड़ हवा के लिए अनुकूलित हुआ।

p

इसके अतिरिक्त, हर स्तनधारी क्रम ने लगातार उन उप स्तरों को जन्म दिया, जो जीवन के नए रूप को प्राप्त करके नए वातावरण में व्याप्त हुए। आज के कई स्तनधारी अपने आदिम आम पूर्वजों से पेलियोसीन युग से अलग हैं।

उष्णकटिबंधीय जंगलों के वृक्षों में, पुराने जगत के बंदरों, आर्बरियल (वृक्ष पर निर्भर रहने वाले जीव) प्राइमेट्स का प्रसार एक अनुकूली विकिरण का उदाहरण हैं। कहा जाता है कि जब कोई समूह जीवों के समूह में पर्यावरण संबंधी परिवर्तन करता है, जो स्वाभाविक रूप से पहले संभव नहीं था, तब अनुकूलन विकिरण होता है। इन परिवर्तित संबंधों को सत्यापन की तर्ज पर समझा जा सकता है जैसे जीवाश्मों की आ ति विज्ञान और जीवित रूपों के तुलनात्मक अध्ययन जो इन जीवाश्मों के सभी संभावित वंशज हैं।

इसके अतिरिक्त, स्तनधारियों के विभिन्न स्तरों और उप-स्तरों ने विभिन्न आवासों के लिए अनुकूलन प्रकार अथवा प्रारूपों में विभेदन, विभाजन या विकीर्णन' किया है। इसलिए प्राइमेट्स के सभी मुख्य समूह आज विभिन्न आहार आदतों के साथ प्रजातियों में शामिल हैं। यद्यपि, कीट खाने, बीज खाने, पत्ती खाने, और कम या ज्यादा सर्वाहारी जेनेरा प्राइमेट की विभिन्न शाखाओं में फिर से दिखाई देते हैं क्योंकि ये शाखाएं पैतृक रेखा से कम या ज्यादा होती हैं। शाखाओं के भीतर यह अनुकूली विकिरण, शाखाओं के बीच समानांतर और कुछ गैर-प्राइमेट श्रृखंला के प्रति अनुकूलन अभिसरण के साथ होता है।

डार्विन ने फिन्चेज पक्षी का प्रसिद्ध उदाहरण दिया है जिसमें अनुकूली विकिरण देखा जाता है। पैची अथवा विचित्र भूमि का एक समय होता है जो पुनःअनुकूली विकिरण के लिए एक प्रमुख स्थान है, यह विचार उद्विकासवादी जीवविज्ञानी द्वारा दिया जाता है। विभिन्न परिदृश्यों के माध्यम से भौगोलिक स्थिति में अंतर को प्रजातियों की विविधता को बढ़ावा देने का कारक माना जाता है। डार्विन के फिन्चेज गालापागोस द्वीप समूह की पैची या खंडित भूमि में भी बसते हैं जिसमें इनकी कई प्रजातियों में विविधता है, जो पारिस्थितिकी और आ ति विज्ञान में भिन्न हैं। विशेष रूप से इनके आकार और प्रारूप में।

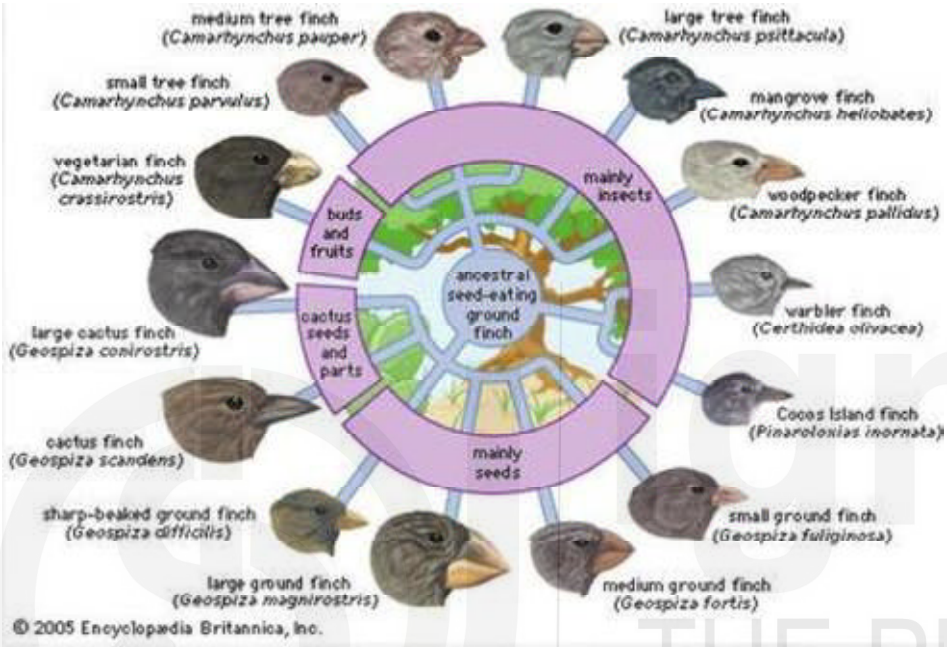

चित्र 1 : गालापागोस फिन्चेज पक्षी में अनुकूली विकिरण

स्रोत : https://www.britannica.com science/speciation

यह अनुकूली विकिरण था जिसने विभिन्न उद्विकास के लिए मार्ग प्रशस्त किया। जिसके कारण फिंचेस के भोजन और संसाधनों तक पहुच आसान हो गई। यह उनकी चोंच पर निर्भर करता है कि उनका भोजन कैसा होगा, उदाहरण के लिए छोटी चोंच वालों ने छोटी चिटियों के साथ-साथ जमीन पर बीज खाने के लिए बेहतर रूप से अनुकूलित किया, और जो पतले व तेज चोंच वाले थे वे कीड़े खाते हैं, और लंबे चोंच वाली फिंजेस अपनी चोंच का उपयोग कैक्टि के अंदर लेकर भोजन के लिए जांच करने के लिए करती हैं। तदानुसार, चोंच में इस तरह की विशेषज्ञता के साथ सात या अधिक प्रजातियां एक ही वातावरण में प्रतिस्पर्धा के बिना रहने में सक्षम हैं या संसाधनों की कमी के कारण कई खत्म भी हो जाती हैं। नतीजतन, चोंच के आकार और प्रारूप में इन रूपात्मक परिवर्तनों को अनुकूली विकिरण द्वारा प्राप्त किया जाता है जो द्वीप के विविधीकरण को जारी रखने की अनुमति देता है।

7.7 विलुप्तता

विलुप्तता तब होती है जब कोई जीव या जीवों का समूह, अर्थात एक प्रजाति का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। यह उद्विकास के माध्यम से होने वाली प्रक्रिया है जिसमें एक नई प्रजाति का गठन जाति उद्भवन की प्रक्रिया के माध्यम से होता है। जीवों और उनके

पारिस्थितिक निवास के बीच संबंध दृढ़ता से स्थापित किया गया (साहनी व अन्य, 2010)। विलुप्त होने का तात्पर्य एक जीव समूह का गायब होना है, जैसे कि प्रजातियों का। यह उद्विकास साक्ष्य से उस प्रजाति के अंतिम व्यक्ति की मृत्यु के कारण स्थितियां उत्पन्न होने से होता है। यह एक विचित्र घटना नहीं है, क्योंकि प्रजातिया उद्भवन द्वारा निर्मित होती हैं और नया जीव पैदा और विकसित होता है जब वे उपयुक्त पारिस्थितिक स्थान प्राप्त करते हैं लेकिन जब वे नई या बदली परिस्थितियों के साथ सामंजस्य नहीं बिठा पाते हैं तब वे विलुप्तता की अवधारणा के तहत खत्म हो जाते हैं। व्यावहारिक रूप से सभी जीवों और पौधों की प्रजातियां जो पृथ्वी पर उपस्थित थी, अब विलुप्त हो गई हैं। विलुप्त होना सभी प्रजातियों की अंतिम नियति प्रतीत होती है। इसलिए, जब अगली पीढ़ी के विलुप्त होने पर प्रजनन करने और पीढ़ी को आगे ले जाने के लिए कोई जीव मौजूद नहीं होता हैं तो यह विलुप्तता अपरिहार्य हो जाती है। प्रजाति भी कई बार कार्यात्मक रूप से विलुप्त हो जाती है, यह तब होता है जब बहुत कम जीव होते हैं और वे अपनी उम्र, खराब स्वास्थ्य व बड़े अंतर और कई बार दोनों लिंगों के जीवों की अनुपस्थिति की वजह से पुनः दूसरे जीव उत्पन्न करने में असमर्थ होते हैं। विलुप्तता सतत है, जीवन के इतिहास के हर दौर में विलुप्तता का इतिहास रहा है भले ही विलुप्त होने की दर सामयिक सामूहिक विलुप्त होने की घटनाओं में बढ़ जाती हो। प्रजातियों का विलोपन उद्विकास में पर्यावरणीय चयन की नकारात्मक भूमिका के कारण होता है जिसमें प्रजातियां जीवन का एक तरीका विकसित कर सकती हैं। और यह वैसे ही होता है जैसे कि पर्यावरण में परिवर्तन इस अस्तित्व का समर्थन करने में असमर्थ है या एक प्रजाति के दूसरे में परिवर्तित होने पर विलुप्त हो जाना है। परिणामस्वरूप प्रजातियां एक सतत, प्रगतिशील उद्विकासवादी वंश का एक खंड होती हैं। इसलिए एक समय अवधि की प्रजातियां जिसमें वह वंश मौजूद होता है, अगली समय अवधि में बाद की प्रजातियों के लिए वे पूर्वज हैं जबकि पुश्तैनी प्रजातियां उस क्रम के माध्यम से विलुप्त हो जाती हैं। प्रारंभिक प्लीस्टोसीन होमिनिड्स, ऑस्ट्रालोपिथेसीन विलुप्त हैं। फिर भी यह संभव है कि आधुनिक होमो सेपियन्स में ऑस्ट्रालोपिथेसीन आनुवंशिक सामग्री के कुछ प्रत्यक्ष वंशज मौजूद हों। गैर-एवियन डायनासोर के विलुप्त होने की घटना क्रेटेशियस– तृतीयक की सबसे प्रसिद्ध घटना है। लेकिन पहले की पर्मियन–ट्राइसिक विलुप्त होने की घटना और भी गंभीर थी, जिसमें लगभग 96 प्रतिशत प्रजातियां विलुप्त हो गईं थीं। होलोसीन युग में विलुप्त होने वाली घटना पिछले कुछ हजार वर्षों में दुनिया भर में मानवता के विस्तार के साथ एक व्यापक सामूहिक विलोपन रही है।

मानव गतिविधिया अब निरंतर विलुप्त होने की घटना का महत्वपूर्ण कारण हैं। ग्लोबल वार्मिंग भविष्य में इसकी तीव्रता में वृद्धि कर सकता है। विकास में विलुप्त होने की वर्तमान स्थिति को बहुत अच्छी तरह से समझा नहीं जा सकता है। यह निर्भर करता है कि किस प्रकार के विलुप्तता पर विचार किया जाता है। निरंतर 'निम्न-स्तरीय' विलुप्त होने की घटनाओं की नींव जो विलुप्तता का अधिकांश भाग तय करती है, वह गठन सीमित संसाधनों में प्रजातियों के बीच प्रतिस्पर्धा का परिणाम हो सकती हैं। यदि एक प्रजाति दूसरे से मुकाबला कर सकती है, तो यह प्रजाति के चयन को उत्पन्न कर सकती है, जिसमें योग्यतम प्रजाति जीवित है और दूसरी प्रजातियां विलुप्त होने की ओर उन्मुख हैं। छिटपुट सामूहिक विलुप्तताएं भी महत्वपूर्ण हैं लेकिन एक चयनात्मक बल के रूप में कार्य करने के बजाय, वे मौलिक रूप से एक गैर-विशिष्ट तरीके से विविधता को कम करते हैं और उत्तरजीविता में तेजी से विकास और जाति उद्भवन के विस्फोट को बढ़ावा देते हैं।

7.7.1 छद्म विलुप्तता

एक मूल प्रजाति के विलुप्त होने पर भी संतति प्रजातिया या उप-जातियो के जीवित होने की दशा को छद्म विलुप्तता कहा जाता है। अन्य मामलों में, यदि प्रजातियों ने कोई नया संस्करण नहीं बनाया है, या कहा जाए तो कोई भी ऐसा नहीं है जो मूल प्रजातियों को विलुप्त होने से बचा सके। प्रागैतिहासिक विलुप्त प्रजातियों में से कई नई प्रजातियों में विकसित हुई हैं। उदाहरण के लिए विलुप्त यूहिपस (जानवर जैसा एक प्राचीन घोड़ा) घोड़े, जेबरा और गधे सहित कई मौजूदा प्रजातियों का पूर्वज था। योहिपस अब जीवित नहीं है, लेकिन इसके वंशज रहे हैं। इसलिए इसे छद्म विलुप्तता कहा जाता है।

अपनी प्रगति को जाचें

3) अपरिवर्तनीयता, समानतंता और अभिसरण, अनुकूली विकिरण और विलुप्तता होने पर एक नोट लिखें।

.....

.....

.....

.....

4) विलुप्तता क्या है इस विकासवादी प्रक्रिया की गंभीर रूप से उदाहरणों के साथ चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

7.8 सारांश

उद्विकास का सामान्य अर्थ है परिवर्तन। जैविक उद्विकास उन बदलावों का अध्ययन है जो जीवित चीजों यानी पौधों और जानवरों में हुए हैं। आधुनिक आनुवांशिक सिद्धांत की प्रगति के अनुसार, अब उद्विकास को पैतृक और मृत आबादी के बीच जीन (एलील) आवृत्तियों में परिवर्तन माना जाता है। लेकिन जीन आवृत्तियों में सीधे परिवर्तन को मापने के लिए व्यावहारिक रूप अप्राप्य है। इसलिए समय के माध्यम से जीवों की आ ति विज्ञान में परिवर्तन के रूप को भी उद्विकास में अनिवार्य रूप से देखा जाता है। रूपात्मक समानता और अंतर के स्तर का विश्लेषण हमेशा उद्विकासवादी अध्ययन का ध्यान केंद्रित करता है। जबकि पशु आबादी के बीच असंतोष की उत्पत्ति जो कि जाति उद्भवन है, जीवविज्ञानियों के लिए एक प्रमुख विषय है।

आनुवांशिक अवधारणाओं के विकास की नींव के बाद, आज हम उद्विकास के संश्लेषित सिद्धांत का अनुसरण करते हैं, जिसमें कहा गया है उद्विकास, विविधताओं और परिवर्तनशील रूपों के निरंतर उत्पादन व प्रा तिक जीवन चयन के माध्यम से कार्यात्मक अनुकूलन का एक

कारण बना। उद्विकास को समझने के दौरान, जातिउद्भवन, अपरिवर्तनीयता, समानतंता, अभिसरण, अनुकूली विकिरण और विलुप्तता जैसी उद्विकास की मूल अवधारणाएं बनी हैं।

7.9 सन्दर्भ

एडेप्टिव रेडियेशन (एन.डी.). *इन विकीपीडियाः द फ्री इनसाइक्लोपीडिया*। खोजा गया एक्सेसड ऑनः 10 जून 2018 को प्राप्त किया गया. रिट्रिव्ड फ्रॉम–https://cn-wikipedia-org/wiki/Adaptivc_radiation

डार्विन, सी (1859), *ऑन द ओरिजन ऑफ स्पीसीज बाई मीन्स ऑफ नेचुरल सलेक्श*. लंदनः मुरे, 247,1859.

डूलिटिल, डब्लू. एफ (2000), *अपरूटिंग द ट्री ऑफ लाइफ. साइंटफिक अमेरिक*; 282(2), 90–95.

इवोल्यूशन (तिथि अनिर्धारित). इन विकीपीडियाः द : द फ्री इनसाइक्लोपीडिया. खोजा गया/एक्सेड ऑन . 3 जुलाई 2018. प्राप्त किया https://en-wikipedia-org/wiki/Evolution

ग्लैन्सडॉर्फ, एन., एक्सयू. वाई. एंड लाबिडन, बी. (2008). द लॉस्ट यूनीवर्सल कॉमन एनसेस्टर रू इमर्जेस, कांस्ट्रीक्टूशन एंड जेनेटिक लेगसी ऑफ एन एलुसिव फोररनर. *बॉयलोजी डायरेक्टर*, 3(1), 29.

ग्रांट, वी. (1971). *प्लांट स्पेशियन* 435 पृ. सं. न्यूयॉर्क और लंदनः कोलंबिया यूनीवर्सिटी प्रेस.

हॉल, बी. एंड हॉलग्रिमसन, बी (2008). स्ट्रिकबर्गर्स इवोल्यूशन. जोन्स एंड बार्टलेट लर्निंग.

लार्सन, सी.एस. (2011) अवर ओरिजिनः डिसकवरिंग फिजिकल एन्थ्रोपॉलाजी.(द्वितीय संस्करण) नॉर्टन एंड कंपनी.

मेयर, ई. (1970). *पापुलेशन, स्पीशीज एंड इवोल्यूशनः एन आर्बिजमेंट ऑफ एनिमल स्पीशी एंड इवोल्यूशन* (खंड 19). हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

मिलर, जी.टी. एंड स्पूलमैन, एस. (2012). *इनवॉरनमेंट साइंसेज. सेनगेज लर्निंग*

साहने, एस., बेंटन, एम.जे., एंड फेरी, पी.ए. (2010). लिंक्स बिटवीन ग्लोबल टैक्सानॉमी डाइवर्सिटी, इकोलॉजिकल डाइवर्सिटी एंड एक्सपेंशन ऑफ वर्टिब्रेट् ऑन लैड्स. बॉयलाजी लैटर्स, आरएसबीएल 2009102.

ल्यूटर, डी. (2000). *द इकॉलजी ऑफ एडेप्टिव रेडियेशन*ः ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस ऑक्सफोर्ड.

सिम्पसन, जी. जी. (1953). द मेजर फीचर ऑफ इवोल्यूशन. कोलंबिया, न्यूयॉर्क.

स्टर्न्स, बी.पी, एंड स्टर्न्स एस. सी, (2000). *वॉचिंग, फ्रॉम द एज् आफ एक्शटिंशन*ः येल यूनिवर्सिटी प्रेस.

वालेस, ए.आर. (1858, अगस्त). ऑन द टेंडेंसी ऑफ वैराइटीज टू डिपार्ट इनडिफिनिटी फ्रॉम द ओरिजनल टाइप. इन प्रोसिडिंग ऑफ द लिनियन सोसायटी ऑफ लंडन. (खंड 3, नं 1858, पृ. 53-62).

7.10 आपकी प्रगति की जाच करने के लिए उत्तर

उत्तर– 1 उद्विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा संबंधित आबादी एक दूसरे से अलग हो जाती है, जिससे नई प्रजातियों (या उच्च समूहों) को जन्म दिया जाता है। विस्तृत समझ के लिए अनुभाग 7.1 देखें।

उत्तर– 2 विभिन्न उद्विकासवादी सिद्धांतों के बीच जाति उद्भवन' वह सिद्धांत है जिसके अनुसार नई जैविक प्रजातियों की उत्पत्ति होती हैं। जाति उद्भवन के विषय में चार भौगोलिक प्र ति के आधार पर प्राप्त होता है, जिसके आधार पर जाति उद्भवन का अनुमान लगाने वाले एक दूसरे से अलग होते हैं। विस्तृत विवरण हेतु इसी इकाई में अनुभाग 7.3 देखें।

उत्तर–3 विस्तृत विवरण के लिए अनुभाग 7.3, 7.4, 7.5 देखें ।

उत्तर–4 विलुप्तता तब होती है जब कोई जीव या जीवों का समूह, अर्थात एक प्रजाति का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। यह उद्विकास के माध्यम से होने वाली प्रक्रिया है जिसमें एक नई प्रजाति का गठन, जाति उद्भवन की प्रक्रिया के माध्यम से होता है। अधिक विवरण हेतु अनुभाग 7.7 देखें।